R.N.I.- UP-HIN/2001/3996
ISSN- 2581-6128

स्थापन दिवस के 24वें वर्ष में प्रवेश

संयम • संस्कार • सन्तुलन

शहर समता

(हिंदी साप्ताहिक)

शोध पत्र

www.shaharsamta.com

'कर्मक्षेत्र रणभूमि यही है, मानव हो तुम कर्म करो।
कर्म से कभी विमुख न रहना, मन में यह संकल्प करो।'-
उमेश श्रीवास्तव

संस्थापकः स्व0 कन्हैया लाल, स्व0 श्रीमती साधना श्रीवास्तव
सम्पादकः उमेश चन्द्र श्रीवास्तव

लक्ष्मीकांत मुकुल पर विशेषांक

वर्ष 24 अंक 31 रविवार, इलाहाबाद, 22 दिसम्बर 2024 पृष्ठ 8 विशेषांक मूल्यः 3 रू0

संपादकीय

इस बार लक्ष्मीकांत मुकुल

मानव मन से उपजी कविता,
सहज-सहज अनुभूति है ।
जीवन की सारी समग्रता,
इसमें आनी जरूरी है ।
रास-रंग की बातें कविता में,
जीवन पक्ष के किस्से हैं।
जाने कितनी बातों का गुच्छा,
इसमें बनते हिस्से हैं ।

तो बात हो रही है बिहार के लक्ष्मीकांत मुकुल की । कविता में जीवन की समग्रता को जीने वाले कवि लक्ष्मीकांत मुकुल की रचनाधर्मिता व्यापक है । उन्होंने आलेख, संस्मरण,

यात्रा वृत्तान्त, गद्य की कई विधाओं पर अपनी कलम चलाई है । किसी एक विचारधारा में आबद्ध न होकर स्वतंत्र लेखन को ही जीवन में महत्व दिया है । विधि स्नातक लक्ष्मीकांत मुकुल ने बहुत सी यात्राएं की, कविता को जिया -सिया और अपनी रचनाओं में बड़े सहज ढंग से अपनी बातें रखी । वह कहते हैं,

तुम मरे कहां हो बापू !
जीवित हो प्रांतर जहान के
उन तमाम लोगों की धड़कनों में,
जो अन्याय के प्रतिकार में झोंक देते हैं
भट्ठियों में सारा जीवन
आजादी की लगन पाले जूझते भ्रष्ट तंत्रों की
कंटीली बाड़ों से लहूलुहान होते हुए

आजादी के दीवाने और आजादी दिलाने वाले मोहनदास करमचन्द गांधी के प्रति कवि की निष्ठा अटूट है । गांधी के जीवन से सबक लेते हुए कवि लक्ष्मीकांत मुकुल ने अन्य मनुष्यों की भांति अपने को भी उन्हीं की जीवन शैली से काफी हद तक प्रभावित माना है, वह कहते हैं

सुबह की चंचल किरणें छू रही हैं गंगा के बहाव को
उसके आभा से चमकते हैं बनारस के ऊँचे घाट,
उत्तरोत्तर सीढ़ियाँ, मार्निंग वॉक करते लोग
दमकते हैं उस पार के बलुआ रेत

इसी तरह वह एक कविता में किताबों की दुनिया की बात करते हुए कहते हैं

कितनी रहस्य भरी है किताबों की दुनिया
पन्नों के बीच दबे मोर- पंख
याद दिलाते हैं बचपन के कच्चे प्यार

कवि लेखक लक्ष्मीकांत मुकुल पर केंद्रित या विशेषांक आपको कैसा लगा, प्रतिक्रिया जरूर दें।

अंत में

तुम लिखो मुकुल जीवन की वह सारी बातें ,
जहां-जहां जिज्ञासा हो ।
सोओ मत उठो तुम लिख डालो ,
जीवन की जो परिभाषा हो ।

उमेश श्रीवास्तव

मेरा लेखन कर्म

कविता मानव मन अनुभूति से उपजी एक सहज अभिव्यक्ति का माध्यम आरंभिक काल से रही है ।समय के साथ साहित्य और कला की अनेक विधाओं का विकास होता गया, इसके बावजूद कविता का वजूद अभी भी केंद्रीय भूमिका की है । कवि का मन अनुभव के आधार पर अपने दौर की जलती भट्ठी के भीतर से लाल होकर निकलता है और निर्वैयक्तिक भाव से जन- पीड़ा को शब्द देता है।मानवीय स्थितियों , मूल्यों और शंकाओं पर वह टिप्पणी करता है । सवाल यह है कि कवि का कार्य इतना ही है कि वह दूर से टिप्पणी करता रहे ? इसका हल है कि कवि को जन समूह में कूदना पड़ता है ,उसे जनता का सहयोगी -सहकर्मी बनना पड़ता है और जरूरत हुआ तो स्थापित और जड़ हो चुके व्यवस्था के खिलाफ हर जोखिम उठाकर उसे विद्रोह करना होता है।

समकालीन कविता हमारी परिचित दुनिया के अनुभव को रचनात्मकता से विस्तृत , गहरा , तीखा और नवीन बनाती है। यह अवश्य है कि रोजमर्रा के इस अनुभव संसार को ठीक से रचने में कवि कभी -कभार चूक भी कर जाता है। सार्थक मूल्यवान अनुभव ही समकालीन कविता की शक्ति है ।सच्चे कवि के लिए मानव द्रोही राजनीति का विरोध आवश्यक है ।इतना ही नहीं ,आज की जिंदगी पर सार्थक मुद्दे उठाने वाला कोई भी कवि इस प्रश्न से बच नहीं सकता ।राजनीति कवि के अस्तित्व और व्यक्तित्व से जुड़ी है। आज का कवि इससे बिना टकराये नहीं रह सकता।असमर्थ कवि इस सच्चे अनुभव को व्यक्त नहीं रह सकता,जबकि समर्थ कवि इस सच्चे अनुभव को खौलाकर कहे बिना नहीं रह सकता।

हिंदी कविता में जीवन समग्रता, संश्लिष्टता, सगुंफन और सफलता का अधिकाधिक समावेश होता जा रहा है । यह हमारी कविताएं की रचनाशीलता का वह दौर है ,जब साहित्य की दुनिया में सृजन और कलात्मकता के नए -नए आयाम उद्घाटित हुए हैं और जीवन ,प्रकृति ,मनुष्य और समाज की सूक्ष्मता तथा सोच के गंभीर और व्यापक होते जाने की आकांक्षाएं सामने आने लगी हैं।अब रचनाशीलता किसी खास विचारधारा की मोहताज नहीं रह गई है ,बल्कि उसके लिए मनुष्यता का बोध एक सर्वमान्य विचारधारा की तरह सामने आया है।

एक किसान कवि होने के नाते मेरी कविताओं मे आए परिवेश , शब्द चित्र , बिंब ,प्रतीक व मिथक खेती किसानी व्यवस्था से जुड़े होते हैं, जो मेरे वर्तमान के परिदृश्यों - जीवन संघर्षों से जुड़े हैं।

लेखक की कलम से

किसानी संवेदना की कविताएँ

अनुज लुगुन

बहुत दिनों के बाद कविता में गाँव की सोंधी महक मिली है । दुनिया में बाजारवाद के प्रवेश करने से ऐसा लगा था जैसे सब कुछ को उसने निगल लिया है । लेकिन लक्ष्मीकान्त मुकुल की कविताओं से गुजरने के बाद लगता हैकि अब भीदुनिया में देशजपन बचा हुआ है । अब भी भाषा में लोक की सहजता मौजूद है । मुकुल की कविताएँ सीधे तौर पर गाँव से जुड़ी हैं । वे गाँव को किसी अप्रवासी की तरह नहीं देखते हैं बल्कि वे गाँव को खेतों में हल जोतते हुए, खलिहान में धान ओसते हुए महसूसते हैं । और यही उनकी कविता की ताकत बन जाती है । वे जानते हैं कि शहर से गाँव के जुड़ने से दुनिया की तस्वीर बदली है साथ ही वे जानते हैं कि इसके साथ ही गहरी साजिशों का दौर भी शुरू हो गया है । तभी वे यह कह पाने में समर्थ होते हैं कि 'गाँव तक सड़क आ गई / गाँव वाले / शहर चले गए'यह उनका सूक्ष्म अन्वेषण है । पूँजीवाद ऐसे ही साजिश रचता है । अपने मुनाफे के लिए वह दुनिया को खुला बाजार बना देना चाहता है । वह दुनिया को चमक भरे सपने दिखाता है लेकिन वह बहुत शातिर तरीके से जनता के संसाधनों पर कब्जा कर लेता है । कवि ने उसे 'चिड़ीमार' कह कर संबोधित किया है ।

लक्ष्मीकान्त मुकुल की कविताएँ किसानी संवेदना की कविताएँ हैं । उनकी भाषा में बक्सर-भोजपुर का लोक है । कविताओं में कथ्य के आलावा उसकी भाषा पाठक को सीधे कवि की दुनिया में ले जाता है । इसके लिए कवि को और कविता को कोई अनावश्यक प्रयास नहीं करना पड़ता है । वे जो जीते हैं, खेतों में जो बोते हैं,उसे वैसा ही उसी भाषा में लिखते हैं । गाँव-गिराँव, खेत- खलिहान की बात करती हुई कविताएँ आधुनिकता बोध से गहरी जुडी हैं । इन सबके बावजूद कवि को अगर उम्मीद है कि उसके 'लाल चोंच वाले पंछी' घोंसले उजाड़ने वाले चिड़ीमारों से मुठभेड़ करेगें तो इसके लिए उसे और अधिक धारदार वैचारिक तैयारी की जरूरत होगी ।क्योंकि अगर आलोकधन्वा जी की शब्दों में कहें तो कलम चलाने वालों को ताकत हल चलाने वालों से ही मिलती है ।

मुकुल की कविताएँ सीधे तौर पर गाँव से जुड़ी हैं । वे गाँव को किसी अप्रवासी की तरह नहीं देखते हैं बल्कि वे गाँव को खेतों में हल जोतते हुए, खलिहान में धान ओसते हुए महसूसते हैं । और यही उनकी कविता की ताकत बन जाती है । वे जानते हैं कि शहर से गाँव के जुड़ने से दुनिया की तस्वीर बदली है साथ ही वे जानते हैं कि इसके साथ ही गहरी साजिशों का दौर भी शुरू हो गया है । शातिर तरीके से जनता के संसाधनों पर कब्जा कर लेता है ।

जीवन वृत्त

लक्ष्मीकांत मुकुल

जन्म - 08 जनवरी 1973
शिक्षा - विधि स्नातक
संप्रति - स्वतंत्र लेखन / सामाजिक कार्य ।किसान कवि/मौन प्रतिरोध का कवि।
कवितायें एवं आलेख विभिन्न पत्र - पत्रिकाओं में प्रकाशित ।
दो कविता संकलन 'लाल चोंच वाले पंछी'' व 'घिस रहा है धान का कटोरा' और ग्रामीण इतिहास पर केंद्रित पुस्तक 'यात्रियों के नजरिए में शाहाबाद' प्रकाशित।

लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं में मौन प्रतिरोध है

- कुमार नयन

आधुनिकता की अंधी दौड़ में अपनी मिट्टी, भाषा, बोली, त्वरा, अस्मिता, ग्राम्यता, को बचाए रखना बहुत कठिन है, खासकर कविता में जहाँ रोज-ब-रोज शब्द अपना अर्थ खोते जा रहे हैं. ऐसे में कोई कविता या संग्रह अपनी जड़ों को तलाश करते हुए मानवीय संवेदना को स्पर्श करे, तो निश्चय ही मन की व्याकुलता और चिन्ता को एक आलंबन मिलता है. युवा कवि लक्ष्मीकांत मुकुल का हाल में ही प्रकाशित काव्य संग्रह 'लाल चोंच वाले पंछी' की अधिकांश कवितायें इस अर्थ में पाठकों को काफी सुकून दे जाती हैं. पुष्पांजलि प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित इस संग्रह में कुल 59 कवितायें हैं, जो स्मृतियों के झरोखे से मानवीय मूल्यों की प्रतीति कराने में सचेष्ट दिखती हैं. कविताओं में अतीत के प्रति व्यामोह है, जो छूट गया, वह कितना जरूरी और मूल्यवान था, इसका एहसास बड़ी सिद्दत से इन कविताएँ में किया जा सकता है. आज के इस क्रूर समय में जहाँ रिश्तों पर बाज़ार का प्रभाव छाने लगा है, कवि एक पहाड़ी गाँव में प्रेम में पगे कोहबर की पेंटिंग को देखकर आशान्वित हो उठता है कि पृथ्वी के जीवित रहने की संभावनाएँ अभी भी जीवित हैं.

लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं में संवेदना का ज्वार है, तो मानवीय मूल्यों के टूटने की पीड़ा भी. सभ्यता के विकास के नाम पर जो शहरीकरण और बाजारीकरण हो रहा है, उसमें गाँव - जवार के तमाम प्राकृतिक अवयव और संसाधन हमसे दूर होते जा रहे हैं और तमाम सुविधाओं के बीच जीवन दूभर होता जा रहा है. आधुनिकता का अँधा दौर हमारी संवेदना को लीलता जा रहा है. हम न स्वयं को, न अपनों को, न अपने गाँव को, न छवर (पतला रास्ता) को पहचान पा रहे हैं - 'बदलते युग की इस दहलीज पर / मानचित्र के किस कोने में बसा है तुम्हारा गाँव / किन सडकों से पहुंचा जा सकता है उस तक?' (बदलते युग की दहलीज पर). कवि आधुनिकता की दौड़ में हो रहे बदलाव में विघटन देख रहा है. 'गाँव तक / सड़क आ गयी / गाँव वाले / शहर चले गये' संग्रह की इस छोटी कविता में त्रासदी भी है, पीड़ा भी. संग्रह की शीर्षक कविता 'लाल चोंच वाले पंछी' बहुत सहज और सरलता से यह एहसास करा जाती है कि जहाँ भी श्रम है, प्रकृति है, बदलाव है, सौंदर्य है, वहां लाल रंग है. कवि ने इस कविता द्वारा तथाकथित रूढ़ी को तोड़ने की कोशिश की है कि लाल रंग कोई हिंसा या खूनी क्रांति का प्रतीक है. लाल रंग तो प्रकृति, प्रगति और सकारात्मक परिवर्तन का द्योतक है.

लक्ष्मीकांत मुकुल की इन कविताओं पर आरोप है कि वे पूरी तरह से नोस्टाल्जिक हैं. कवि किसी भी तरह की आधुनिकता या कोई नयापन से गुरेज करता हुआ दिखाई देता है, परन्तु इसके बावजूद कविताओं में एक अनुपस्थित या परोक्ष प्रतिरोध का स्वर है. जो पूरी तरह मौन होकर भी वैश्विक पूंजीकरण और उत्तर आधुनिकता के समक्ष तन कर चीख रहा है.

बहुत ही शालीनता और सूक्ष्मता से कवि 'चिड़ीमार' कविता में आम लोगों को आगाह करता है - 'वे आयेंगे तो बुहार ले जायेंगे हमारी खुशियाँ, हमारे ख्वाब, हमारी नींदें, वे आयेंगे तो सहम जायेगा नीम का पेड़, वे आयेंगे तो भागने लगेंगी गिलहरियाँ.' कविताओं में व्यवस्था के प्रति मौन विरोध है, किन्तु कहीं-कहीं संयमित आक्रोश भी मुखर हुआ है, 'इधर मत आना वसंत' में कवि का आक्रोश प्राथमिकी दर्ज कराता हुआ चीख पड़ता है - 'दूर - दूर तक फैली हैं / चीत्कारों के बीच चांचरों की चरचराहटें / फूस - थूनी - बल्लों से ढंकी दीवालों पर / पसर रही है रणवीर सेना की सैतानी हरकतें.' कवि मन इस क्रूर व्यवस्था से इतना व्यथित है कि वह इस दुनिया से ही पलायन करने को संकल्पित हो उठता है. 'आत्मकथ्य' कविता में व्यक्त इन भावात्मक विचारों को पढ़कर पाठक यह समझ सकते हैं कि कवि क्रूरता, अन्याय, कुव्यवस्था से लड़ने के बजाय कायरतापूर्वक पलायन को तरजीह देता है, जो कवि प्रकृति के सर्वथा प्रतिकूल है. परन्तु विचारणीय है कि जब मानवीय मूल्यों पर घोर संकट छाया हुआ हो और आम आदमी नियतिवाद के दुष्चक्र में फँसा हुआ नैराश्य और अवसादग्रस्त हो तो कवि की अभिव्यक्ति का विचलित हो जाना स्वाभाविक है. यहाँ कवि अवसादग्रस्त पीड़ित व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता हुआ यह निर्णय लेने को विवश दिखता है - 'देखोगे / किसी शाम के झुरपुटे में / चल दूंगा उस शहर की ओर / जिसे कोई नहीं जानता ..... लोग खोज नहीं पायेंगे / कहीं भी मेरा अड़ान..... परिकथाओं से मांग लाऊंगा वायु वेग का घोड़ा / और चल दूंगा उस अदृश्य शहर की ओर.' ऐसा नहीं है कि लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं में सिर्फ अतीत प्रेम और निराशात्मक बिम्ब हैं. इसमें भविष्य भी है और 'अंखुवाती उम्मीद' भी-

'काश ! ऐसा हो पाता / पिता लौट आते खुशहाल / माँ की आँखों में पसर जाती / पकवान की सोंधी गंध / मेरी अंखुवाती उम्मीदों को मिल जाते / अँधेरे में भी टिमटिमाते तारे.'

दरअसल कवि की चिन्ता मानवीय रिश्तों की मिठास और प्रगाढ़ता बचाए रखने की है, जो सिर्फ और सिर्फ उन तमाम चीजों और क्रिया - कलापों को संजोकर रखने से ही संभव है, जो हमारे लिए बेहद आत्मीय प्राणदायी है, इसलिए - 'महुआ बीनती हुई / हज़ार चिंताओं के बीच / नकिया रही है वह गंवार लड़की / कि गौना के बाद / कितनी मुश्किल से भूल पाएगी / बरसात के नाले में / झुक - झुककर बहते हुए / नाव की तरह / अपने बचपन का गाँव.' उम्मीद जगाती कविता 'उगो सूरज' में कवि अपने मन की इच्छाएँ बेलौस होकर ब्यक्त करता है - 'सूरज ऐसे उगो ! / छूट जाए पिता का सिकमी खेत / निपट जाए भाइयों का झगड़ा / बच जाए बारिश में डूबता हुआ घर / माँ की उदास आँखों में / छलक पड़े खुशियों के आंसू.' कुछ ऐसे ही भाव 'गाँव बचाना' में भी उभर कर आये हैं.

कवि अपने गाँव और गाँव से जुड़ी सभी चीजों को, सात पुश्तों से चली आ रही इंसानी परंपरा की बुनियाद पर टिकी संस्कृति को बचाये रखने की गुहार लगाता है.

संग्रह की सबसे लम्बी कविता 'कोचानो नदी' जिसके किनारे कवि का गाँव ही नहीं हजारों गाँव बसते हैं, जो जन - जन के लिए ही नहीं, पेड़ - पौधों, पशु - पंछियों के लिए भी जीवनदायिनी है, वह संकटग्रस्त है. कवि को डर है कि नदियों और पर्वतों का सौदा करने वाली यह ब्यवस्था - 'कहीं रातों - रात पाट न दे कोई / मेरे बीच गाँव में बहती हुई नदी को / लम्बे - चौड़े नालों में बंद करके / बिखेर दे ऊपरी सतह पर / भुरभुरी मिट्टी की परतें / जिस पर उग आये / बबूल की घनी झाड़ियाँ / नरकटों की सघन गांछें.' संग्रह की अनेक कवितायें उल्लेखनीय हैं, जिसमें कवि की स्मृतियों का भावुक प्रलाप विविध प्रतीकों व बिम्बों में झलकता है, वस्तुतः ये कवितायें समय के दबाव को झेलती हुई मनुष्यता की कराह है, जो यथास्थिति एवं जड़ होती जा रही व्यवस्था के विरुद्ध प्रतिरोध रचती हैं. बेहद आंचलिक या देशज , ठेठी बोली के शब्दों के प्रयोग ने इसे लोकभाषाई ताना - बाना से पूरी तरह सराबोर कर दिया है. कहीं - कहीं ठेठ गंवई शब्दों के व्यामोह में अभिव्यक्ति कि स्पष्टता बाधित हुई सी लगती है. कवि को इसमें सावधानी बरतने की आवश्यकता है.

फिर भी सीधे सपाट बिम्बों और प्रतीकों में अभिव्यक्त लोक चेतना से आप्लावित ये कवितायें सफल और सार्थक वितान रचती हैं. सर्वत्र कवि का शिल्प वैशिष्ट्य और निजपन पाठकों को सुखद स्मृतियों के सहारे मानवीय संवेदना की अनुभूति प्रदान करते हैं. कहना चाहिए कि समकालीन आंचलिक कवियों के बीच लक्ष्मीकांत मुकुल अपनी कविताओं के खुरदरे रचाव और अपनी अल्हड अभिव्यक्ति में अलग और अभिनव हैं.

संपर्क -
खलासी मोहल्ला,
बक्सर - 802101

लोक-संस्कृति को समर्पित है 'घिस रहा है धान का कटोरा'

-डॉ. राणा अवधूत

लक्ष्मीकांत मुकुल का नया काव्य संग्रह 'घिस रहा है धान का कटोरा' लोक जीवन और लोक संस्कृति के ताने-बाने में रची-गढ़ी गई काव्य निधियों का संग्रह है। विभिन्न विषयों को केंद्र में रखकर तैयार किए गया यह काव्य संग्रह तमाम विविधता को समेटे हुए है। इसमें एक ओर जहां गांव-देहात की समस्याओं को फोकस करते हुए ग्रामीण परिवेश में कविताएं रची-बुनी गई हैं तो दूसरी ओर कोरोना कालखंड के विभिषका को भी शब्दों में पिरोकर कवि ने इसे और खास बना दिया है। ग्रामीण संस्कृति और लोकजीवन पर आधारित काव्य संग्रह में कवि ने धान के कटोरा के रूप में मशहूर शाहाबाद के गंवई और देसज परंपरा को अपनी कविताओं के माध्यम से चरितार्थ करने में पूरी तरह से सफल रहे हैं। हिन्दी और भोजपुरी भाषा-साहित्य के लिए समर्पित भाव से सृजनकार लक्ष्मीकांत मुकुल इस काव्य संग्रह के जरिये एक मंजे हुए कवि के रूप में नजर आते हैं।

वैसे काव्य संग्रह का टाइटल 'घिस रहा है धान का कटोरा' स्वयं में इतना आकर्षक है कि साहित्य के प्रेमी इसे पढ़ने से नहीं चूकेंगे। सच कहे तो प्रथम दृष्टया ही यह संग्रह पाठकों को शाहाबाद इलाके में धान की खेती के साथ उसके समृद्धशाली इतिहास के झरोखा से गुजारते हुए पंक्तियों के माध्यम से साहित्य के रस में भिंगोने में भी सफल दिखता है। कविता का मानव जीवन एवं धर्म के इतिहास से जुड़ाव को प्रमाणित करते हुए कवि अपने संग्रह में धर्म, इतिहास, प्रेम और मानव जीवन के दैनंदिनी से जुड़े पक्षों को भी फोकस कर शब्दों में पिरोया है। इस काव्य संग्रह की अनेक कविताओं में इतिहास की बारीक उपस्थिति दिखाई पड़ रही है। चूंकि कवि का क्षेत्रीय गांव-धाम के लोक इतिहास लेखन में गहरी रूचि रही है। पूर्व में उनकी एक किताब 'यात्रियों के नजरिये में शाहाबाद' आ चुकी है। इसका असर उनके काव्य सृजन पर स्पष्ट रूप से दिख रहा है। वे अपनी कविताओं के माध्यम से कई मिथकीय संदर्भों से परिचित कराते हैं। यह कुछ काव्यों में मुखर रूप से उभर कर सामने आती हैं। काव्य के विशिष्ट रूप को यह संग्रह आधारभूत तथ्य दे रही है।

रोहतास जिला के दिनारा निवासी लक्ष्मीकांत मुकुल पेशेवर रूप से खेती-किसानी का काम करते हुए साहित्यिक रचनाधर्मिता में गतिशील बने रहने वाले साहित्यकारों में शुमार हैं। पिछले तीन दशक से साहित्य सृजन में वे तल्लीन रहे हैं, इसके पहले उनकी एक और काव्य संग्रह 'लाल चोंच वाले पंछी' बहुत पहले ही प्रकाशित हो चुकी हैं। वहीं इतिहास लेखन में भी सक्रिय रहे लक्ष्मीकांत मुकुल कविताओं के सृजन में अपने इतिहास बोध को रखना नहीं भूले। यह काव्य संग्रह एक ओर साहित्यिक पुट के साथ लोक जीवन-संस्कृति एवं लोक परंपरा को जीवित रखने का प्रयास करती है तो दूसरी ओर पुराने शाहाबाद के विभिन्न गांवों की भौगोलिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं धार्मिक गतिविधियों और तत्कालीन रहबासियों के रूझानों को कविताओं के माध्यम से जानने-समझने में मदद करती है। दरअसल मुकुल जी अपनी कविताओं के माध्यम से समाज के प्रति सोच रखने के साथ ही उन्नति के बीच नैतिक मूल्यों और समृद्धशाली परंपरा को बचाने के लिए भी चिंतित नजर आते हैं, और यह उनकी कविताओं को सामान्य से बिल्कुल अलग खड़ा करती है।

लक्ष्मीकांत मुकुल ग्रामीण-कस्बाई इलाके में रहने वाले गंभीर साहित्यकार, समर्पित भाषासेवी अध्येता हैं। वैसे तो यह मूलतः हिन्दी और भोजपुरी साहित्य के आदमी हैं। जैसा कि इस काव्य संग्रह में 75 कविताएं शामिल हैं, इनमें चार भोजपुरी कविताएं भी हैं। 'भरकी में चहुंपल भईसा' लंबी कविता में चार कविताओं को शामिल कर कवि अपने भोजपुरी प्रेम को स्पष्ट रूप से जाहिर कर रहे हैं। शीर्षक कविता 'घिस रहा है धान का कटोरा' संग्रह की सबसे महत्वपूर्ण कविता है। यह कविता कुल 17 खंडों में तैयार की गई है, जो कवि की विशाल व उदात्त कल्पनाशीलता को प्रमाणित करती है। साहित्य व इतिहास का संबंध मानव जीवन एवं समाज से जुड़ा हुआ है। मानव जीवन है तो साहित्य है और समाज है तो उसका इतिहास भी कुछ ना कुछ रहा है। यह स्पष्ट है कि पुराना शाहाबाद यानि भोजपुर, बक्सर, रोहतास और कैमूर जिलों का यह इलाका धान की पैदावार के लिए मशहूर रहा है। शायद इसलिए यह इलाका धान के कटोरे के रूप में विख्यात रहा है। हालांकि कवि ने कृषक-श्रम प्रधान इन इलाकों में धान की खेती को निकट से महसूस किया है, इसके बावजूद वे कृषकों की समस्याओं और हाल-फिलहाल आ रही दुश्वारियों को समझकर उन्होंने बाजारवादी व्यवस्था में किसानों की परंपरा को खतरे में देख धान के कटोरे को घिसते हुए देख रहे हैं, महसूस कर रहे हैं। इन क्षेत्रों में समय के साथ साहित्य का स्वरूप बदला है। कवि संग्रह को शोधपरक दृष्टि से बनाये हैं। उन्होंने इन क्षेत्रों की सामाजिक, आर्थिक-राजनैतिक माहौल की पड़ताल करती कविताओं को पेश किया है।

इस संग्रह में वैसे तो कुल 75 कविताओं को शामिल किया गया है, जो अपनी विविधता और तारतम्यता के साथ पाठकों को बांधकर रखने में सक्षम दिखती है। कविताओं में सहज-सरल भाषा और शब्दावली का प्रयोग हुआ है, इससे काव्यगत बोध रखते हुए संग्रह कहीं से बोझिल नहीं लगती। एक ओर शीर्षक कविता में 17 उप कविताएं शामिल हैं तो भोजपुरी कविता में भी चार उप कविताएं शामिल हैं। इसी तरह कोरोना- काल को केंद्रित कविता 'कोरोनाकाल की जख्में टीसती हैं भगेलुआ को' में पांच उप कविताएं शामिल हैं, तो कविता 'यादों में वसंत का प्यार' में भी चार उप कविताएं शामिल की गई हैं। एक दो और कविताएं हैं जैसे कि 'मां' और 'युद्ध' शीर्षक कविताओं में भी तीन-तीन उप कविताएं हैं। एक और कविता है 'कोयल' शीर्षक से है, इस कविता में भी कुल पांच उप कविताएं हैं। इस हिसाब से संग्रह में कुल 111 कविताएं शामिल हैं।

इस काव्य संग्रह में कुछ लंबी कविताएं भी शामिल हैं, जो कवि की रचनाशीलता और उनके कविकर्म के वैविध्य धर्म निर्वहन को प्रमाणित करता है। कई कविताएं लंबी होने के बावजूद बोझिल नहीं लगती हैं। जैसे कि संग्रह की पहली कविता 'छोटी लाइन की छुक-छुक गाड़ी' ही एक लंबी कविता है, जैसे कि कवि अपने बचपन की यादों को समेटते हुए पुराने शाहाबाद के आरा-सासाराम लाइट रेललाइन के सहारे पुरानी स्मृति को कविता के माध्यम से परोसा है। साहित्यिक पुट से लबरेज कविता पाठकों को अंत तक पढ़ने के लिए विवश करती हैं। कवि शब्दों के सहारे औपनिवेशिक काल में शाहाबाद के शौर्यपूर्ण गौरवशाली इतिहास और उस दौर में यातायात के प्रमुख साधन के रूप में छोटी रेललाइन को विस्तार से सामने रखने में सफल रहे हैं। इसी तरह एक और लंबी कविता 'फिर लौटकर आएगा बुकानन' में कवि कविता के बहाने शाहाबाद के इतिहास को एक बार फिर से टटोलने की कामयाब कोशिश करते हैं। विदित हो कि ईस्ट इंडिया कंपनी की विश्वप्रसिद्ध खोज-यात्रा ब्रिटीश सर्वेयर फ्रांसिस बुकानन के नेतृत्व में हुई थी। यह यात्रा 1812-13 में हुई थी। इस यात्रा में शाहाबाद के कई ऐतिहासिक स्थलों के बारे में प्रमाणिक जानकारी सामने आई थी।

इस मामले में कुछ लंबी कविताएं अपने भाव संप्रेषण में असफल नजर आती हैं। जैसे कि 'देखना फिर से शुरू किया दुनिया को' में कवि प्रेयसी के सहारे शब्दों को रचते-बुनते आगे तो बढ़ते हैं लेकिन कविता के अंत में बिखराव नजर आता है। इसी तरह एक और कविता 'बाइसवीं सदी में' में कवि कल्पनाशीलता में आधुनिक तकनीकी विकास को नकारते हुए दिखते हैं। हालांकि यह उनके नजरिये और विचारधारा से जुड़ी हुई होती है। जो कि कई कविताओं में स्पष्ट रूप से अपना प्रभाव छोड़ती नजर आ रही हैं। बावजूद काव्य संग्रह में कई ऐसी कविताएं भी शामिल हैं जो सभी वय के लोगों को पसंद आएंगी। इन्हीं में से एक कविता 'अयोध्या में परदादी की धर्मशाला कहां है?' कविता रोचक होने के साथ ही सामयिक बन पड़ी है। इस तरह एक और कविता 'घना बरगद थे लोहिया जी' में कवि ने अपने शब्दों में लोहिया जी के विशाल व्यक्तित्व के अक्स को खींचने की पूरी कोशिश की है। कवि प्रकृति से जुड़ी तमाम नदी, नाले, पहाड़, जलधारा, कोयल, आदि तमाम सजीव-निर्जीव वस्तुओं को केंद्र में रखकर कविताएं रचते हैं। उनकी कई कविताएं तो संबंधित मिथकीय संदर्भों से उद्धत होती हैं। जिससे उनकी प्रमाणिकता सत्य की कसौटी पर और बढ़ती जाती है।

दरअसल लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताएं यथार्थ के धरातल पर एक पुख्ता जमीन तैयार करती हुई आमलोगों के जनजीवन से गुजरती हुई प्रतीत होती हैं। कवि का लोक-जीवन और लोक-परंपरा से गहरा जुड़ाव कविताओं को और खास बना देता है। उनकी कविताओं के विषयवस्तु यहां के निवासियों की केवल गतिविधियां ही नहीं होती, बल्कि धार्मिक क्रियाकलाप, सामाजिक गतिविधि, आर्थिक लेनदेन की प्रक्रिया, स्थापत्य के तत्व और स्मारक भी होते हैं। यदि इस नजरिये से देखेंगे तो कवि कई बार उनके बीच होते हुए काव्य की संवेदना से आपको परिचित कराता है। ग्राम्य संस्कृति के वाहक के रूप में कवि हिन्दी और भोजपुरी दोनों भाषाओं को एकसमान दृष्टिकोण से देखते हैं। सबसे खास बात कि उनकी कविताओं में कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग भी हुआ है, जिनका इस्तेमाल इन दिनों या तो बंद हो गया है, या काफी कम हो रहा है। जैसे कि 'गूंगी जहाज' कविता में कवि बालमन की स्मृति को उकेरते हुए बताया है कि भोजपुरी अंचल में मालवाहक जहाजों को गूंगी जहाज कहा जाता है। बच्चे इसे खास तौर से देखते-निहारते हैं। इसी तरह नचदेखवा, गोहराना और सुआ-सुतरी जैसे दुर्लभ शब्दों के प्रयोग से कवि ने संग्रह को खास बना दिया है।

काव्य संग्रह में भोजपुरी की वैसे तो एक ही कविता है, 'भरकी में चहुंपल भईंसा', कहने को इस एक कविता में कुल चार कविताएं शामिल हैं, सभी कविताएं लंबी जरूर हैं, लेकिन अपनी शिल्प विधा से ये सभी कविताएं लोक के बेहद करीब नजर आती हैं। इन कविताओं में कवि ने भोजपुरी के उन देसज और लोक से जुड़े जमीनी शब्दों का प्रयोग किया है, जिनका प्रयोग अब नहीं के बराबर हो रहा है। इस तरह के शब्दों का प्रयोग सामान्यता आमलोग तो दूर कवि-साहित्यकार भी नहीं कर रहे हैं। अपने पाठकों की सुविधा हेतु कवि ने कुछ विलुप्त हो रहे भोजपुरी शब्दों के शब्दार्थ भी संग्रह के अंत में दे दिये हैं। 'भरकी', 'खरमेंटाव', 'बियाछत', 'उखमंजलन', 'लुकार', 'खोभार', 'पेहान', 'गंवलेहर', 'मटीगर', 'भकसावन' और 'गोड़ार' आदि इन शब्दों के प्रयोग से कवि ने साबित किया है कि इन शब्दों का प्रयोग वह अपने दैनिक जीवन में रोज देखते रहे हैं। इसलिए इनका प्रयोग भी वे स्वाभाविक रूप से अपनी कविताओं में करते हैं। यहीं नहीं कविताओं में कवि कुछ नए शब्दों का इजाद भी करते हैं, जैसे कि 'चमकउआ' मतलब चमकने वाला, 'कवलेजिहा' माने कॉलेज जाने वाली, 'इसकोलिहा' मतलब स्कूल जाने वाला या फिर 'बजरूआ' मतलब बाजार के प्रभाव में। इस तरह के नए और देसज शब्दों के प्रयोग से उनकी कविताएं सहज में ही और भी आकर्षक हुई हैं।

वैसे तो कवि को अपने कविताओं के विषय में ठोस जानकारी है, या यूं कहे कि वे इन कविताओं के माध्यम से अपने आस-पड़ोस और व्यक्तिगत जीवन के विभिन्न पहलुओं को शब्दों में पिरोया है। बावजूद वे कई जगहों पर कविताओं को अनावश्यक रूप से विस्तार देते हुए नजर आ रहे हैं, हालांकि कवि की विद्वता या उनकी कल्पनाशीलता इतनी विशाल है कि कविताओं में भटकाव के बाद भी प्रवाह जारी रखने में सफल रहते हैं, लेकिन काव्य शैली के दृष्टिकोण से कई बार लंबी कविताएं पाठकों से तारतम्य बनाने में सफल हो पाएं, इसमें संदेह होता है। हालांकि कवि की संवेदनशीलता व समाज के प्रति गहनशीलता उनकी कविताओं को सहज और सरल रूप से ग्राहय बनाती है। वे अपनी कविताओं में मां-पिता से लेकर दादा-दादी, कृष्ण -राधा के प्रेम से लेकर लोहिया-बापू को भी याद करते हैं। कविताओं को कथ्य शैली में प्रस्तुत करना, उन लोगों को याद करना, कवि की विशिष्ट शैली को दर्शाता है। कवि ने संग्रह में प्रेम से जुड़ी कई कविताओं को प्रस्तुत किया है। 'यादों में वसंत का प्यार', 'हरेक रंग में दिखती हो तुम' एवं 'देखना फिर से शुरू किया दुनिया को' सहित कुछ और कविताएं भी हैं जो कवि के प्रेममयी दिल के बहुत ही करीब नजर आती है।

अपने मूल राज्य बिहार को लेकर कवि की संवेदनाएं काफी गहरी दिखती रही हैं। 'बिहारी', 'दिल्ली की सड़कों पर किसान' एवं 'पंचायत चुनाव में गांव' आदि कविताओं में कवि ने अपने राज्य के किसानों, वंचितों, मजदूरों और चुनाव में होने वाले तिकड़मबाजियों को भी शब्दों में पिरोया है। इसी तरह बिहार के नियोजित शिक्षकों को लेकर लिखी गई कविताएं उल्लेखनीय हैं। 'नियोजित शिक्षक' व 'अवकाश पाये शिक्षक' कविताएं कवि के विशाल उद्यमशीलता और समाज के गहन अन्वेषण का प्रमाण है। पूर्ण संतोष की बात है कि कवि ने अपने संग्रह में शामिल कविताओं में सिर्फ अभिव्यक्ति भर नहीं है, बल्कि उनकी कविताएं शाहाबाद इलाके की सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक पहलुओं का पुख्ता प्रमाण भी प्रस्तुत करती हैं। कवि के अनुसार वहां के जीवन में कठिनाइयां हैं, दुश्वारियां हैं, समस्याएं हैं तो उनका समाधान भी यहीं पर उपलब्ध है। कवि कविता के माध्यम से अपनी संवेदना के साथ ही अपनी रचनाधर्मिता व लगनशीलता को रखने में सफल दिखते हैं।

संग्रह में कवि कई कविताओं के माध्यम से लोक-परंपरा और लोक-जीवन के प्रतिबिंब को रखते हुए यह साबित करते हैं कि कवि केवल अभिव्यक्ति के लिए नहीं, बल्कि आत्मसंवेदना के स्तर पर भी पाठकों को प्रभावित करते है। कारण कि उनकी कविताओं में तत्कालीन शाहाबाद के गांव, कस्बों, बाजारों और छोटे -बड़े शहरों की आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति के बारे में पता चलता है। दरअसल क्षेत्र विशेष की जानकारी देते हुए कवि कविताओं के माध्यम से वहां की भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक व धार्मिक स्थलों के बारे में जानकारी देने के साथ ही लोक जीवन की गहरी लकीरों को प्रस्तुत करने में कामयाब दिखते हैं। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि लक्ष्मीकांत मुकुल की अध्ययन शैली बहुत साफ-सुथरी और सारगर्भित है। अपने काव्य लेखन में इतिहास की गहरी समझ रख साहित्यिक शैली में काव्य संग्रह को प्रस्तुत किया है। इस संग्रह के माध्यम से लोक-जीवन को केंद्र में रख कवि ने काव्य लेखन के लिए एक नई लकीर खींची है। लोक-जीवन पर गहरी पकड़ के साथ लिखी गई कविताएं अपने पाठकों को सहज ही आकर्षित करेगी। ग्रामीण जीवन की गहन अध्ययनशीलता कवि के मनोयोग और लोक-संस्कृति के अध्ययन के लिहाज से यह काव्य संग्रह काफी संप्रेषणीय और प्रभावशाली है। जो पाठकों के काव्यगत समझ को और बेहतर करेगी।

लक्ष्मीकांत मुकुल की चार कविताएं

राजघाट

चौकोर टीले की दीवारों की बीच

काले संगमरमर के गोलाकार स्थापत्य की
किनारी पर तांबे की कलश में
उठती है लौ, देती हुई उजास दुनिया को
बहती हवा छूती है उसे मनुष्यता विरोधी
ठिठुरन की विरुद्ध
पेड़ों पर चहकते पंक्षी
सुनाते हैं उसकी अदम्य गाथाएं
जो लाठी थामे लड़ता रहा उसे बेखौफ आततायियों से
जिनके डंके की चोट कांपती थी सारी धरती
लॉन में फूलों पर मंडराते भौरे- तितलियां
गुनगुनाते हैं 'हे राम' की अनुगूंज
जिसे जपता रहा था वह रुखसत काल तक

तुम मरे कहां हो बापू !
जीवित हो प्रांतर जहान के
उन तमाम लोगों की धड़कनों में,
जो अन्याय के प्रतिकार में झोंक देते हैं
भट्ठियों में सारा जीवन
आजादी की लगन पाले जूझते भ्रष्ट तंत्रों की
कंटीली बाड़ों से लहूलुहान होते हुए
भूख से बेहाल गृह विहीनों के उभरते सपनों में
एम एस पी की मांग करते हुए सिंधु बॉर्डर पर निहत्थे
किसानों के दिलों में, जो भिड़ते हैं सत्ता के बैरिकेटों,
कीलों,ड्रोन से गिरते आंसू बमों,
वॉटर कैनल की बौछारों से
मुल्तानी मिट्टी, भीगे जूट के बोरों,
उड़ते पतंग से प्रतिरोध करते हुए
जैसे चरखा चलाते, तकली से सूत कातते
किया था तुमने त्याग बैरूनी लिबासों का

कोई मुर्दाघाट नहीं है राजघाट
पंचभूत में विलीन हो गए उस साहसी का
विश्रामस्थल है, जो रेल से धकेले जाने पर भी
दत्तचित बना समर नीतियां बुनता रहा
फिरंगी राज के सूर्यास्त देखने की पहल में
वह अब भी करोड़ों लोगों की धौंकनियों में
जीवित हो जाता है
जल - जल कर जी उठने वाले
ठीक, फिनिक्स पक्षी की तरह !

कुतुबमीनार के सामने

छुटपन के दिनों में जब भी आता था बाइसकोप वाला
उमड़ आता था गलियों में बच्चों का सैलाब
जादुई बक्से की खोल हटते ही पहली नजर में
दिख जाता कुतुबमीनार
लाल- तंबई रंगत की नलिका - सी पतली इमारत
छेदते हुए आकाश, मुकाबले में हराते हुए लंबे सुपारी वृक्षों
को, बातें करते हुए बादलों, रेत भरी आंधियों, पलारी
जले धुओं से टकराता
अडिग नईम - सा खड़ा है सदियों से प्रहरी की भांति

अभी मेरे सामने तना है वह
खंडहरों, अधूरी इमारतों, नायाब स्थापत्यों के बीच
यादें संजोता हुआ निर्मित समय से
समकाल तक का इतिहास
स्थानीयता का मिट्टी- पानी- हवा पाता सूंघता हुआ
बारहा उजड़ती- बसती दिल्ली के तमाम बदलते रूप
समय के शासकों के रोब, क्रूरता, दिखावपन, संघात
आम अवाम के छलकते दर्द भरे आंसू,
कराहटें, छटपटाहटें
सत्ता सत्ता लोभी दलालों,
मनसबदारों के गिरगिट - सी चालें
अपने बुर्ज की चिड़िया उड़ान नेत्रों से
देखा है कुतुब मीनार
सुनाने को कदीम के बेमिसाल किस्से -मसलहे
एक सजग दास्तानगो की तरह

वह देखता रहाः छः लाख भारतीय गांवों की
रसक्तता को किस स्याही सोख्ता से निचोड़ रही है
लुटियंस दिल्ली, नई - पुरानी दिल्लीयों को आत्मसात
करता एनसीआर का उदर बढ़ता जा है कबंध- सा
अपने आजू-बाजू के क्षेत्र को निगलता हुआ
पिशाच - सा चबाता हुआ हरे- भरे निकटवर्ती खेतिहर
गांव - कस्बों,छोटे शहरों को अपनी खोंच में
समाते हुए झामुंडा राक्षस - सा
पलायन, शहरीकरण, आधुनिकता के
नित नए मायाजाल फैलाते पिछड़े प्रदेशों के
सोखते हुए लोकायतन की संचित थाती
विदेशी पूंजी के सहारे नाचती बार बालाओं की तरह

चकाचौंध में भ्रमित होती हमारी नई पीढ़ी के सपनें

सिर्फ गुम्बदों,मीनारों,प्रस्तर पत्थरों के ढेर नहीं होते
ये स्मारक- यह कुतुबमीनार
जादुई बक्से के बरक्स अभी सामने दिखते इस प्राचीन
इमारत की बनावटें , मंजिलें, खिड़कियां, झरोखे जालि
यां, मेहराब सिर्फ जंगली कपोतों के
निवास गृह नहीं है मात्र
मूक स्वरों में बताते हैं हमें माजी, ज़माना - ए - हाल,
आक़िबत के तिलिस्म
कि वे युग बीत जाने के बाद भी कायम- दायम है
ठीक, जली खेत में खुटियों की साबुत की तरह !

बनारस में नौकायन

सुबह की चंचल किरणें छू रही हैं गंगा के बहाव को
उसके आभा से चमकते हैं बनारस के ऊँचे घाट,
उत्तरोत्तर सीढ़ियाँ, मार्निंग वॉक करते लोग
दमकते हैं उस पार के बलुआ रेत
श्मशान की दहकती लाशों की चिरांध में धुल जाती हैं
कलरव करते जल पंछियों की चहचहाहट

नाविक नदी की शांत देह को त्याग
ले जा रहा है नाव दरिया की मुख्य धारा में
मजधार में विचरती है नाव मस्तानी
जैसे किसी कोमलांगी के अनछुवे मौलिक पहलुओं को
स्पर्श कर रही हों जलधाराएँ
और वह चिहुंक रही हो हवा के तरंगों के साथ
उछलती कूदती तारिणी तरूणी - सी
जल के धरातल से नाव का उठना, गिरना झूले-सा
आनंद दे रहा है हमें
कितना अनूठा उदात्त प्रेम के प्रकटीकरण का
आभास हो रहा है यहाँ
मानों पृथ्वी के पहले मानुस हों हम ही
हमारे लिए ही बनी हो अभी यह धरती,
आकाश, नदी, नाव, किनारा सब कुछ
नया-नया-सा जीवन,
प्रेम, खुशियां, मिलन, छुवन...
चप्पू चलाता माँझी गुनगुनाता है कोई गीत
जैसे पहली बार नाव खेने गया उसका आदिम पुरखा
छेड़ा होगा कोई आद्य राग
नदी, नाव, पतवार, धार-मजधार, प्रेम,मिलन
बिछुड़न के दर्दीले स्वर
गूँज रहे होंगे उसकी ध्वनियों में, जिसमें तप रही होगी
तफानों, लहरों, आंधियों से जूझते नाव को
बचा लेने की तड़प
मचलती होगी उसके अंतस में और थिरक
गये होंगे उसके होंठ

'नदी नाव संयोग' का आनंद उठाते हम नाव सहयात्री
थिरक रहे थे देखते हुए सुबह की उजास में
दमकते हुए बनारसी घाटों-मंदिरों के रंग-बिरंगे चित्र
सुनते हुए तेज बहाव को नाव के चीरने से
उठती जल ध्वनियाँ
गुनगुनाते हुए मछुआरों के गीत,
जो जाते हैं मछलियाँ मारने जाते हुए
दशाश्वमेध घाट पर दिखती
जीवन के नश्वरता के विरुद्ध !

किताबें

कितनी रहस्य भरी है किताबों की दुनिया
पन्नों के बीच दबे मोर- पंख
याद दिलाते हैं बचपन के कच्चे प्यार
उनके लिखित उतरते जाते हैं हौले से
आत्मा की गहवर में
उसके विस्तृत फैलाव में गुम हो जाती है
हमारी कूप मंडुकता !

शहर समता - ब्यूरो प्रमुख

देहरादून ब्यूरो - निशा अतुल्य,
सतना ब्यूरो - डॉ ऊषा सक्सेना,
रीवां ब्यूरो - साधना तिवारी,
लखनऊ ब्यूरो - मंजु सक्सेना,
जबलपुर ब्यूरो - शैली सेठ,
लुधियाना ब्यूरो - श्रद्धा शुक्ला,
जौनपुर ब्यूरो - डॉ मधु पाठक,
हैदराबाद ब्यूरो -रीना प्रदीप कुमार,
भिलाई ब्यूरो - संध्या चंदेल,
गोरखपुर ब्यूरो - चित्रा श्रीवास्तव,
दिल्ली ब्यूरो - अफरोज़ अजीज,
तिनसुकिया गोलाघाट ब्यूरो - रंजना बिनानी,
प्रयागराज ब्यूरो - डॉ आकांक्षा पाल,
भीलवाड़ा ब्यूरो - डॉ राजमति पोखरना,
इंदौर ब्यूरो - आशा जाकड़,
शिलांग ब्यूरो - डॉ अनीता पंडा,
बिलासपुर ब्यूरो - स्मृति मिश्रा 'रीति,
रायपुर ब्यूरो - सीमा निगम,
कानपुर ब्यूरो - सीमा वर्णिका,
भोपाल ब्यूरो - दीपमाला तिवारी,
दमोह ब्यूरो- भावना शिवहरे,
मण्डला ब्यूरो - डॉ अर्चना जैन
बनारस ब्यूरो - सुनीता जौहरी,
आरा ब्यूरो - सिम्पल सिंह,
बिजनौर ब्यूरो - ऋतुबाला रस्तोगी,
पठानकोट ब्यूरो - क्षमा लाल गुप्ता,
सप्तरी नेपाल ब्यूरो - करुणा झा,
धम्तरी ब्यूरो - कामिनी कौशिक,
रामपुर ब्यूरो - चंद्रिका कुमार 'चांदनी',,
मुरादाबाद ब्यूरो - अभिव्यक्ति सिन्हा,
कटनी ब्यूरो - मीरा भार्गव,
पटना ब्यूरो - अंजू भारती

शहर समता (हिन्दी साप्ताहिक) के वार्षिक एवं तीन वर्षीय सदस्य बनें।

वार्षिक सदस्यता के लिए -200/- **तीन वर्षीय सदस्यता के लिए -500/-**

कृपया 'शहर समता' के नाम से चेक या आनलाइन भेज सकते है।
IFSC Code- PUNB0100120 A/c.-1001050011592

व्यवस्थापक
शहर समता (हिन्दी साप्ताहिक)
289/238 ए (अनंत भवन) कर्नलगंज ,इलाहाबाद-211002

पीडीफ़ के लिए
shaharsamta.
blogspot.com
पर जाएँ ।

संरक्षक
स्व0 कन्हैया लाल, स्व0 साधना श्रीवास्तव

सम्पादक
उमेश चन्द्र श्रीवास्तव
आरएनआई नं0 UPHIN/2001/3996

उप संपादक
डा0 अरूण कुमार मिश्रा
रचना सक्सेना

Mo. 9005239332 Email-shaharsamta@gmail.com

स्वत्वाधिकारी/मुद्रक/प्रकाशक/सम्पादक उमेश चन्द्र श्रीवास्तव द्वारा इण्डियन प्रेस (पलि.) प्रा0लि0, 36 पन्ना लाल रोड, इलाहाबाद से मुद्रित कराकर 289/238ए, (अनन्त भवन) कर्नलगंज, इलाहाबाद से प्रकाशित।

इस अंक के प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी तथा समस्त विवादों का निपटारा इलाहाबाद न्यायालय में ही होगा।

लोकजीवन का सौंदर्य और श्रम संस्कृति की आभा

कौशल किशोर

हिंदी की प्रगतिशील कविता लोकधर्मी कविता है जिसके केंद्र में किसान, मजदूर, गांव और लोकजीवन है। समकालीन कविता में इनकी उपस्थिति कम होती गई है। वहां नगरीय व महानगरीय जीवन बोध और मध्यवर्गीय संवेदना का पहलू प्रधानता ग्रहण करता चला गया है। कविता में किसानों की चर्चा हुई भी है तो मुख्य तौर से उनकी आत्महत्या को लेकर। इसी विषय पर कविताएं लिखी गई हैं। पिछले दिनों तीन कृषि कानूनों के विरुद्ध दिल्ली बार्डर पर किसान आंदोलन चला, उसे लेकर भी काफी कविताएं लिखी गईं। ये आंदोलन परक कविताएं हैं जिनका प्रमुख स्वर सत्ता और व्यवस्था के विरोध-प्रतिरोध का है।

लक्ष्मीकांत मुकुल लोकधर्मी कवि हैं। इनकी कविताएं लोकजीवन में गहरे धंसी हैं। इनकी अपनी माटी, भूगोल, भाव-भूमि और लोकेल हैं। उनका दूसरा संग्रह है 'घिस रहा है धान का कटोरा' जो सृजनलोक प्रकाशन, नयी दिल्ली से आया है। इसमें 75 कविताएं संकलित हैं जो'किसानी संस्कृति को बचाए रखने के लिए जद्दोजहद करते कृषि योद्धाओं को समर्पित' है। शीर्षक और समर्पण से यह बात सामने आती है कि किसान संस्कृति संकट में है और कवि उसे बचाना चाहता है। उसकी प्रतिबद्धता इस संस्कृति के लिए संघर्षरत कृषि योद्धाओं के साथ है। कविताएं गांव, किसान और आम जीवन में प्रवेश करती हैं, इतिहास से लेकर वर्तमान की यात्रा करती हैं और इसी भाव-भूमि पर खड़े होकर अमानवीय होती वर्तमान व्यवस्था से टकराती हैं। इनमें लोकजीवन का सौंदर्य और श्रम संस्कृति की आभा है।

'घिस रहा है धान का कटोरा' संग्रह की शीर्षक कविता है। यहां जिस 'धान का कटोरा' की बात है, वह भोजपुर, बक्सर, रोहतास व कैमूर का अंचल है। यह किसान बहुल क्षेत्र है। यहां की मुख्य फसल धान है और यही जीवन का आधार है। गंगा और सोन जैसी नदियां खेतों की सिंचाई करती हैं। धान की पैदावार किसानों की खुशहाली और समृद्धि का कारण है। इसी से उनकी संस्कृति सृजित है जो सोन और गंगा की धारा की तरह जनजीवन में प्रवाहित है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण यह अंचल 'धान का कटोरा' के नाम से लोकप्रिय हुआ। इसकी पहचान बनी। लेकिन आज यह कटोरा 'घिस रहा है'। वह दुर्गति का शिकार है। किसानों का आर्थिक से लेकर सामाजिक जीवन और उसकी संस्कृति व अस्तित्व संकट में है। कविता अतीत में जाती है और किसान संस्कृति को सामने लाती है, वहीं उसके क्षरण तथा इसके कारणों की पड़ताल भी करती है।

'घिस रहा धान का कटोरा' लम्बी कविता है। इसके 17 खंड है। हरेक खंड में किसी खास पहलू पर बात की गई है। जैसे पहले खंड में धान के खेत के मनमोहक दृश्य का दर्शन होता है। कवि उसे प्रसूता की तरह देखता है। धान की बालियां हवा के संग अठखेलियां करती हैं। धान के खेतों का होना मनुष्य के लिए ही नहीं पक्षियों के लिए भी खुशी का सबब है। कविता में खेतों के बीच की पगडंडियों को लेकर बिम्ब द्रष्टव्य हैः 'खेतों के बीच से गुजरती है पगडंडियां/संवारे बाल के बीच उभरती मांग की तरह'। इन पंक्तियां को पढ़ते हुए मनमोहक दृश्य उपस्थित होता है। वहीं, दूसरे खंड में धान को लेकर लोककथा है जो विभिन्न पीढ़ियों से होते हुए आज तक पहुंची है। इतिहास से लेकर वर्तमान तक की यात्रा में उसका रूप, रंग, प्रकार और प्रजातियां भी बदलती गई हैं।

लक्ष्मीकांत मुकुल अपनी इस कविता के माध्यम से कृषक संस्कृति को सामने लाते हैं। यह मात्र धान की खेती करने तक सीमित नहीं है बल्कि इसने कृषक संस्कृति को भी निर्मित किया है। इसमें सामूहिकता व सामाजिकता की भावना और आत्मनिर्भरता थी। लोगों की जरूरतें सीमित थीं। किसी के सामने हाथ पसारने की जरूरत नहीं थी। यह किसानों का हुनर और सृजनात्मक क्षमता थी कि उन्होंने किसिम-किसिम के चावल पैदा किये। उसके बीज सुरक्षित रखे। कवि मुकुल लोकजीवन में हर्ष और उल्लास देखते हैं। उन्हें रोपनी के गीत, कटनी के गीत याद आते हैं। उन्हें मानसून की पहली बूंद का इंतजार याद आता है, जिसमें लोग हर्षित होते थे। प्रेम के भाव उमड़ने-घुमड़ने लगते। कजरी के, प्रेम और प्रणय के गीत गाए जाते। बैलों के घुंघरू बजते और मन प्रफुल्लित हो जाता। किसान बैलों को अपने बेटे की तरह प्यार करते और माल मवेशियों को अपने जन की तरह ख्याल रखते। लेकिन अब वह बात नहीं है। समय के साथ समाज में बदलाव आया है। इस पर कवि की नजर है और उसे यूं व्यक्त करता हैः

'बदलता गया जमाना/बदलते गए समय के रिवाज/खेती के औजार /बैलों की जोड़ी/बदलते गए रिश्तों को आंकने के पैमाने/धान के भुस्से की तरह/उड़ गई ग्रामीण लोकधारा/गड़गड़ाते ट्रैक्टर दौड़ने लगे खेतों में/हाइब्रिड बीजों की गर्दन काट/नई बाजार लूट संस्कृति की धमक पर'

वैसे तो परिवर्तन लाजिमी है। लेकिन कैसा है यह परिवर्तन? लक्ष्मीकांत मुकुल को इस बात की गहरी पीड़ा है कि लोक जीवन में जो चीजें गहरे पैठी थीं, वह आज नष्ट कर दी गईं या की जा रही हैं। यह परिवर्तन 'नई बाजार लूट संस्कृति की धमक पर' हो रहा है। इसीलिए कवि के अंदर आक्रोश और बेचैनी है।

मतलब, यह पूंजीवाद का ग्राम्य जीवन और कृषि उत्पादन में प्रवेश है। पूंजीवाद की प्रकृति ही लूट और मुनाफा है और अपने लूट को छिपाने के लिए वह तरह-तरह के झूठ को समाज में फैलाता है। इस तरह समाज के सांस्कृतिक पर्यावरण को अपने अनुरूप ढ़ालता है। समाज में लाभ, लोभ और लालच की प्रवृत्ति बढ़ती है। समाज में स्वार्थपरता बढ़ती है। यह किसान संस्कृति के विरुद्ध है जिसकी बुनियाद लोक जीवन और सामूहिकता है। यही लक्ष्मीकांत मुकुल की परेशानी का कारण है। किसान संस्कृति के लिए उनके मन में जो छटपटाहट है, वह कविता में अभिव्यक्त होता है।

वर्ग समाज में कोई भी संस्कृति द्वन्द्वविहीन या अंतर्विरोध रहित नहीं हो सकती। भोजपुर का अंचल सामंती प्रभुओं के जुल्म-शोषण-अत्याचार और सामंतवाद विरोधी किसान आंदोलन के लिए जाना जाता है। सामंतों और किसानों के संघर्ष का यह पहलू लक्ष्मीकांत मुकुल की कविता में अनुपस्थित रहता है। लेकिन पूंजीवाद का गांव, किसान और आम आदमी के जीवन में प्रवेश से जो समस्याएं पैदा हुईं हैं, उसे लेकर कवि की चिन्ता है। उसे अतीत के दिन याद आते हैं। प्रथम दृष्टया लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं में अतीत के प्रति मोह दिखता है। वह परिवर्तन के विरुद्ध होने का आभास देती हैं। लेकिन कविताओं में प्रवेश करने पर लगता है कि वह उस परिवर्तन के विरुद्ध है जो मानव समाज द्वारा अर्जित सामाजिक मूल्यों के विरुद्ध है।

एक महत्वपूर्ण बात, लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताएं अतीत के माध्यम से इतिहास को विलुप्त होने से बचाती हैं। यह तो ऐसा दौर है जब स्मृतियों को खत्म किया जा रहा है। ऐसे मे यह वर्तमान के संघर्ष का ही हिस्सा है। मुकुल अपनी यादों के सहारे वर्तमान की लड़ाई लड़ते है। बल्कि यह कहना ज्यादा श्रेयस्कर है कि स्मृतियां वर्तमान के संघर्ष में इंधन का काम करती हैं और मानवीय प्रतिबद्धता को सुदृढ़ करती हैं।

'छोटी लाइन की छुक छुक गाड़ी', 'कुलधारा के बीच मेरा घर', 'यादों में बसंत का प्यार', 'जोलहल्लूट में बचे बद्रूद्दीन मियां' आदि ऐसी अनेक कविताएं संग्रह में हैं जिनमें कवि वर्तमान और अतीत के बीच आवाजाही करता है। आज भले ही जीवन सुपरफास्ट ट्रेन की तरह दौड़ रहा हो लेकिन वास्तविक जिंदगी की स्थिति ठहरे हुए ट्रेन की तरह हो गई है। तमाम समस्याओं से लोग घिरे हैं, वहीं सांस्कृतिक स्तर पर पूंजीवादी मूल्यों ने उन्हें ग्रसित कर रखा है। स्वार्थपरता, निजता के प्रति आग्रह, सामाजिकता का हनन, द्वेष, ईर्ष्या, आपसी मारकाट जैसे मूल्य प्रभावी हुए हैं। ऐसे में कवि का पुराने दिनों को याद करना और स्मृतियों की ओर जाना स्वाभाविक है क्योंकि उसमें प्रेम व अपनापन होता था, संबंधों में प्रगाढ़ता और निश्छलता होती थी। उसमें दिखावापन नहीं था। लोगों में एक दूसरे के प्रति सहयोग का भाव रहता था। इसलिए उसे याद करने से कवि को मानसिक राहत मिलती है। इन पंक्तियों में देखें-

'धीमी रेलगाड़ी धीमी चलती थी सबकी जीवन चर्या/तब मिलते थे लोग हाथ मिलाते हुए नहीं/बल्कि गलबहियां करने को आतुर खास अंदाज में/छा जाती थी रिश्ते नाते की उपस्थिति की महक'

लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताएं सामंतवाद से पूंजीवाद की ओर हो रहे संक्रमणकालीन दौर की कविताएं हैं। सत्ता की राजनीति वोट की राजनीति में ढ़ल गई है। 'पंचायत चुनाव में गांव' में कवि इस बात को ले आता है कि किस तरह वोट की राजनीति में गांव जाति-धर्म के मकड़जाल में फंस गया है। सामान्य जीवनचर्या सामान्य नहीं रह गई है। समाज में नया ध्रुवीकरण हुआ है। गांव युद्ध का मैदान बन गया है। गांव की पंचायत पर दबंगों का दबदबा है। वर्चस्ववादी शक्तियों का प्रभुत्व ऊपर से नीचे तक बना हुआ है। सच का साथ देने वालों को उसकी कीमत चुकानी पड़ती है। वोट तो जैसे बाजार-हाट की वस्तु बन गई है। वह कहते हैंः

'जो बेचते नहीं अपना वोट सौदागरों को/नरमेघों की गिद्ध दृष्टि लगी रहती है उन पर/उनके खेत रखे जाते हैं बिन पटे/उनके बच्चे निकाल दिए जाते हैं स्कूल से/घर से निकलने को रोके जाते हैं उनके रास्ते/उनकी औरतें रहती हैं हरदम असुरक्षित'

यही लोकतंत्र है जिसमें 'तंत्र' बचा है, 'लोक' गायब है। इसमें गरीब श्रमिक समाज के लिए जगह नहीं है। गांव में रहने का आधार सिमटता गया है तो शहर में भी उनके श्रम की कोई इज्जत और मान-मर्यादा नहीं है। पूरब जिसमें भोजपुर का अंचल शामिल है, उसकी बड़ी समस्या विस्थापन-पलायन है। सामंतवाद की मार हो या पूंजीवाद की, उन्हें रोजी-रोटी के लिए शहरों-महानगरों की ओर पलायन करना पड़ा है। 'बिहारी' कविता में विस्थापन के इसी दर्द की अभिव्यक्ति है - 'दुखों का पहाड़ लादे सिर पर/चले आते हैं बिहारी' लेकिन क्या उन्हें सामान्य जिंदगी भी नसीब होती है? हाड़तोड़ मेहनत के बाद भी जिल्लत की जिन्दगी मिलती है। ऐसे में अपना गांव और वहां की मिट्टी की सोंधी सुगंध की याद आना स्वाभाविक है। लक्ष्मीकांत मुकुल के काव्य की यह विशेषता है जिसमें वर्तमान में रहते हुए वह अतीत की ओर जाती है तथा 'परदेस' में जीते हुए 'बिहारी' अपना 'देस' यानी 'गांव का गुलाबी चेहरा' नहीं भूल पाता है। यह लोक संस्कृति ही है जो दुखों को सहने-उबरने की ताकत देती हैः

'बिहार से बाहर कमाने गए/युवकों के अंतस में महकती है मिट्टी की गंध/उनके पसीने की टपकन से/खिलखिलाता है गांव का गुलाबी चेहरा'

कोरोना काल ने 'बिहारी' मजदूरों की दशा-दुर्दशा और धनाढ्य व मध्यवर्ग की मतलबपरस्ती पर पड़े परदे को तार-तार कर दिया। इन्हीं बिहारी मजदूरों को 'प्रवासी मजदूर' कहा गया जिन्हें लॉकडाउन में महानगर छोड़ने को बाध्य किया गया। उन्हें सड़को पर ढ़केल दिया गया। वहां उनके साथ जो क्रूर व्यवहार हुआ, उसकी मार्मिक और यथार्थपरक अभिव्यक्ति 'कोरोना-काल की जख्में टिसती हैं भगेलुआ को' में है। यहां 'भगेलुआ' एक व्यक्ति नहीं है। वह पूरब के श्रमिक समाज का प्रतिनिधि पात्र है। वह महानगरों और उद्योगों में श्रम का मुख्य श्रोत हैं। कविता कोरोना काल में श्रमिक समाज के प्रति बरती गई सरकार और व्यवस्था की निष्ठुरता को उजागर करती है। आज वे यादें जख्म की तरह टीसती हैंः

'जब-जब बहती है पुरवैया की बयार/स्वतः आते हैं लाठी से मार खाए जख्मों के दर्द/कोरोना-काल के घवाधुल जख्मों की यादें/बेचैन कर देती है भगेलुआ को/जैसे खाते समय मुंह में कुचल गए हों/आलूचाप में मिच...।'

समाज में जो घटता है, वह इतिहास में ही दर्ज नहीं होता है बल्कि वह साहित्य में भी संवेग और संवेदना के साथ अभिव्यक्त होता है। वह सृजनात्मक दस्तावेज बन जाता है। कोरोना काल में लिखी कविताएं उस यथार्थ को जिन्दा रखती हैं और इन्हें जिन्दा रखा भी जाना चाहिए ताकि सत्ता और व्यवस्था के जनविरोधी चरित्र और बर्बरता को समझा जा सके।

लक्ष्मीकांत मुकुल की नजर हमारे समय पर है। कविताएं उससे साक्षात्कार करती हैं। ऐसा करतते हुए भी कवि एक पल के लिए भी अपने लोकजीवन की जमीन को नहीं छोड़ता है बल्कि उस पर मजबूती से खड़े होकर वह देश-दुनिया और समय-समाज को देखता-परखता है। उसका नजरिया वर्तमान के प्रति आलोचनात्मक है। देखेंः

'यह कैसा समय है/रोजगार मांगने वालों को कहा जाता है/टुकड़े टुकड़े गैंग वाला/न्याय की गुहार करने वालों को/आतंकवादी/विश्वविद्यालय के होनहार छात्रों को/अर्बन नक्सली/रोटी के लिए भुखमरी झेल रहे लोगों को/देशद्रोही..... यह कैसा समय है/जब गहन अंधेरे को उजाला/संडास के पानी को गंगाजल/लुटेरों को सही मनुष्य/मानने का चलन हो गया है/इस समय'

ऐसा ही समय है जब अपराधी, हत्यारे, बलात्कारी, लुटेरे सम्मानित हो रहे हैं और सच्चाई और ईमानदारी की राह पर चलने वाले लोगों को जेल की काल कोठरी मिल रही है। विविधता हमारा संस्कृतिक वैशिष्ट्य है। उसे विलुप्त किया जा रहा है। प्रकृति का दोहन हो रहा है। प्राकृतिक ही नहीं सामाजिक पर्यावरण भी खतरे में है। इतिहास बदला जा रहा है। युवाओं के मानस को विषाक्त किया जा रहा है। कहने का आशय कि संस्कृति को सिर के बल खड़ा कर दिया गया है और असामाजिकता ही सामाजिकता तथा अमानवीयता ही मूल्य है।

लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताएं विविधताओं से भरी है। इनके अनेक रंग हैं। एक तरफ बाजरवाद व संप्रदायवाद पर आधारित सत्ता संस्कृति के प्रति तीव्र नफरत और क्षोभ का भाव है, वहीं श्रमिकों-शोषितों के प्रति प्रेम की सलिला अनवरत बहती रहती है। संग्रह में एक कविता है 'हरेक रंग में दिखती हो तुम'। यह प्रेम के रंग में सराबोर कविता है जिसमें यह व्यक्त है कि प्रेम में बड़ी जीवनी शक्ति है। वह कठोरता के हिमखण्ड को भी पिघला सकता है। यह भाव कविता में कुछ यूं व्यक्त होता हैः

चूल्हें की राख सा नीला पड़ गया है/मेरे मन का नीला आकाश/तभी तुम झम से आती हो/जलकुंभी के नीले फूलों जैसी खिली-खिली/तुम्हें देखकर पिघलने लगते हैं/दुनिया की कठोरता से सिकुड़े/मेरे सपनों के हिमखण्ड'

'यादों में वसंत का प्यार', 'बिम्ब-प्रतिबिम्ब', 'देखना फिर से शुरू किया दुनिया को' आदि कई कविताएं हैं जिनमें प्रेम छलछलाता हुआ मिलता है। लक्ष्मीकांत मुकुल के काव्य में जो बिम्ब हैं, वे गढ़े हुए नहीं हैं बल्कि लोकजीवन के हैं। उनमें कृत्रिमता नहीं सजीवता है। कविता में ऐसे बिम्ब-प्रतीक भरे पड़े हैं जैसे - 'लीची की/मधुर आभास लिए/वैजन्ती फूलों -सी/आंचल लहराती/मसूर कर पत्तियों की तरह/धीमी डुलती हुई'। इनका प्रयोग वही कवि कर सकता है जिसका प्रकृति से गहरा और भावनात्मक लगाव हो।

सार रूप में हम कह सकते हैं कि लक्ष्मीकांत मुकुल हिन्दी के दुर्लभ कवि हैं जहां लोकजीवन व किसान संस्कृति की प्रामाणिक अभिव्यक्ति मिलती है। इसी बुनियाद पर वे कविता की दुनिया रचते हैं और उसे व्यपकता भी प्रदान करते हैं। यहां 'दिल्ली की सड़कों पर किसान' हैं तो 'नए अवतार में चालबाज' और 'बेहाल पंछियों पर शातिर नजरें' भी हैं। 'आकाश की तरह विस्तृत पिता' मिलेंगे तो 'धनहर खेत' व 'नदी सरीखी' मां का दर्शन होगा। कहने का आशय कि कवि के पास विषय की विविधता है। भाषा सहज-सरल और बोधगम्य हैं लेकिन अख्यानपरकता और कथात्मकता के कारण कविताएं विस्तार ले लेती हैं जिससे बचा जा सकता है। ग्रामीण अंचल की बोलियों का जिस तरह इस्तेमाल हुआ है, उससे हिन्दी को जिन्दगी मिलती है।

बात अधूरी रह जाएगी यदि संग्रह की आखिर कविता जो भोजपुरी में है की चर्चा न की जाए। इस कविता से गुजरते हुए मुक्तिबोध की कविता 'तय करो किस ओर हो तुम?' की बरबस याद आ जाती है। अपने देशज अन्दाज में कविता ललकार भी है और हम सबके सामने सवाल भी है कि पूंजीवादी-साम्राज्यवादी सत्ता जब 'मारखाहवा भईंसा' के रूप में हमारा सबकुछ खत्म कर देने पर आमादा हो, ऐसे में हम क्या करें?ः

'भागल जाव कि भगावल जाव ओके सिवान से
भकसावन अन्हरिया रात में लुकार बान्ह के।'

एफ - 3144, राजाजीपुरम, लखनऊ - 226017
मोबाइल - 8400208031

घिस रहा है धान का कटोरा (लंबी कविता) : एक मूल्यांकन

तेज प्रताप नारायण

बक्सर, बिहार के लक्ष्मीकांत मुकुल वैसे तो विधि स्नातक हैं लेकिन खेती-किसानी में ही उनका मन रमता है । 'घिस रहा है धान का कटोरा' उनकी एक लम्बी कविता है ।लम्बी कविताएँ वैसे भी इस भागती दौड़ती ज़िन्दगी में कवि कहाँ लिखते हैं और जो कुछ लिखी भी जा रहीं है वे इतना अमूर्तन रूप में है जिसमें कवि अपनी सारी विद्वता उड़ेलने के प्रयास में रहता है । ऐसे में ' घिस रहा है धान का कटोरा ' कविता का स्वागत किया जाना चाहिए ।

इस कविता में कवि की दृष्टि से कृषक संस्कृति का अतीत ,वर्तमान और भविष्य कुछ भी बचा नहीं है ।कवि की दृष्टि 360 डिग्री दौड़ी है और सब कुछ समेट लिया गया है कविता में । कवि ने अपनी कविता के माध्यम से कृषक संस्कृति के उत्थान और पतन ,उसमें हो रहे विकास या क्रमिक ह्रास सबकी बात रखी है ।गाँव से शहर की ओर पलायन हो ,कृषि का मशीनीकरण हो ,रसायनिक खादों का अत्यधिक उपयोग हो या अधिक उत्पादन की हवस ।

'अत्यधिक उत्पादन की हवस में फट गई धरती की कोख ।'

बदलाव इतनी तेजी से हुआ है कि बहुत कुछ उड़ गया है ।बाज़ारीकरण, मशीनीकरण, पूँजीवाद और अब नये कृषि कानून और इसका परिणाम ;

'धान के भूसे की तरह उड़ती रही ग्रामीण लोकधारा '

अधिक यांत्रिकीकरण का नुकसान यह होता है कि पहले आदमी मशीन को चलाता है और फिर मशीन आदमी को चलाती है और आदमी मशीन में लुप्त हो जाता है ।

अति किसी भी वस्तु की सही नहीं होती है,चाहे वह निजीकरण हो,मशीनीकरण हो ,शहरीकरण हो,आदर्शवाद हो,राष्ट्रवाद हो या कुछ और ।अति का परिणाम हमेशा बुरा होता है । अति हमेशा सहअस्तित्व के विरुद होती है।

किसान ,इतिहास की लम्बी परंपरा का वाहक होता है ।किसान ही सभ्यता का जनक है ।किसान मेहनती और स्वाभिमानी होता है ;

अकाल महामारी के दिनों में भी
भीख माँगने नहीं गये आन गाँव
कभी उनके गाँव की डलिया नहीं उठी ।

यही किसान जब खेतों की जुताई करता है तो मानों वह खेतों का श्रृंगार कर रहा हो ;

'जब्बर घासों से जकड़ी करइल मिट्टी को
जैसे चीरती है कंघी सिर के उलझे बालों को ।',

या,

'खेतों के बीच से गुज़रती पगडंडियां
साँवरे बालों के बीच उभरती माँग की तरह '

किसान और प्रकृति का अद्भुत तादात्म्य होता है और यह बात एक किसान ही महसूस कर सकता है :

'जब भी घूमती हैं घने बादलों के साथ
आकाश में मानसूनी हवायें
धान के पौधे हिलकोरे लेते हैं खेतों में
हिलोरें लेता है किसान के भीतर का जल '

'धान का कटोरा ' एक बिम्ब प्रधान कविता है ।ग्रामीण देशज शब्दों से पंक्ति दर पंक्ति सुन्दर बिम्बों से सजी हुई है ।चाहे वह रोपाई का समय हो,जुताई का समय अथवा रोपाई और मड़ाई का ।

कृषक संस्कृति में खेती एक व्यक्ति का काम नहीं होता है बल्कि पूरा परिवार ही उसमें शामिल होता है ।इसी सहधर्मिता के कारण राग-विराग,प्रणय,वेदना आदि की समवेत स्वर में रागात्मक अनुभूति होती है । रोपती हुई औरतें अपना सारा दुख- दर्द,वेदना ज़मीन में रोप देती हैं ।

'धान का कटोरा 'आदिम से आधुनिक की यात्रा भी कही जा सकती है । समाज में धान के कटोरे को हथियाने का संघर्ष ज़ारी है वह चाहे नई कृषि नीति के माध्यम से हो या नव पूँजी वाद के माध्यम से ।

गोदान के होरी से लेकर आज के किसान की भी हालत कमोबेश वैसी ही है ।पहले भी शासक बहरे थे और आज भी बहरे हैं ,तभी तो किसान आत्महत्या करने पर विवश है और खुले आसमान के नीचे हांड़ को कंपाने वाली सर्दी में आंदोलन रत है ।

आज के समय का बड़ा प्रश्न यही है कि क्या धान का कटोरा बचा रहेगा ?

संपर्क सूत्र - tej.pratap.n2002@gmail.com

लोक-संस्कृति को समर्पित है 'घिस रहा है धान का कटोरा'

-डॉ. राणा अवधूत

लक्ष्मीकांत मुकुल का नया काव्य संग्रह 'घिस रहा है धान का कटोरा' लोक जीवन और लोक संस्कृति के ताने-बाने में रची-गढ़ी गई काव्य निधियों का संग्रह है। विभिन्न विषयों को केंद्र में रखकर तैयार किए गया यह काव्य संग्रह तमाम विविधता को समेटे हुए है। इसमें एक ओर जहां गांव-देहात की समस्याओं को फोकस करते हुए ग्रामीण परिवेश में कविताएं रची-बुनी गई हैं तो दूसरी ओर कोरोना कालखंड के विभिषका को भी शब्दों में पिरोकर कवि ने इसे और खास बना दिया है। ग्रामीण संस्कृति और लोकजीवन पर आधारित काव्य संग्रह में कवि ने धान के कटोरा के रूप में मशहूर शाहाबाद के गंवई और देसज परंपरा को अपनी कविताओं के माध्यम से चरितार्थ करने में पूरी तरह से सफल रहे हैं। हिन्दी और भोजपुरी भाषा-साहित्य के लिए समर्पित भाव से सृजनकार लक्ष्मीकांत मुकुल इस काव्य संग्रह के जरिये एक मंजे हुए कवि के रूप में नजर आते हैं।

वैसे काव्य संग्रह का टाइटल 'घिस रहा है धान का कटोरा' स्वयं में इतना आकर्षक है कि साहित्य के प्रेमी इसे पढ़ने से नहीं चूकेंगे। सच कहे तो प्रथम दृष्टया ही यह संग्रह पाठकों को शाहाबाद इलाके में धान की खेती के साथ उसके समृद्धशाली इतिहास के झरोखा से गुजारते हुए पंक्तियों के माध्यम से साहित्य के रस में भिंगोने में भी सफल दिखता है। कविता का मानव जीवन एवं धर्म के इतिहास से जुड़ाव को प्रमाणित करते हुए कवि अपने संग्रह में धर्म, इतिहास, प्रेम और मानव जीवन के दैनंदिनी से जुड़े पक्षों को भी फोकस कर शब्दों में पिरोया है। इस काव्य संग्रह की अनेक कविताओं में इतिहास की बारीक उपस्थिति दिखाई पड़ रही है। चूंकि कवि का क्षेत्रीय गांव-धाम के लोक इतिहास लेखन में गहरी रूचि रही है। पूर्व में उनकी एक किताब 'यात्रियों के नजरिये में शाहाबाद' आ चुकी है। इसका असर उनके काव्य सृजन पर स्पष्ट रूप से दिख रहा है। वे अपनी कविताओं के माध्यम से कई मिथकीय संदर्भों से परिचित कराते हैं। यह कुछ काव्यों में मुखर रूप से उभर कर सामने आती हैं। काव्य के विशिष्ट रूप को यह संग्रह आधारभूत तथ्य दे रही है।

रोहतास जिला के दिनारा निवासी लक्ष्मीकांत मुकुल पेशेवर रूप से खेती-किसानी का काम करते हुए साहित्यिक रचनाधर्मिता में गतिशील बने रहने वाले साहित्यकारों में शुमार हैं। पिछले तीन दशक से साहित्य सृजन में वे तल्लीन रहे हैं, इसके पहले उनकी एक और काव्य संग्रह 'लाल चोंच वाले पंछी' बहुत पहले ही प्रकाशित हो चुकी हैं। वहीं इतिहास लेखन में भी सक्रिय रहे लक्ष्मीकांत मुकुल कविताओं के सृजन में अपने इतिहास बोध को रखना नहीं भूले। यह काव्य संग्रह एक ओर साहित्यिक पुट के साथ लोक जीवन-संस्कृति एवं लोक परंपरा को जीवित रखने का प्रयास करती है तो दूसरी ओर पुराने शाहाबाद के विभिन्न गांवों की भौगोलिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं धार्मिक गतिविधियों और तत्कालीन रहबासियों के रूझानों को कविताओं के माध्यम से जानने-समझने में मदद करती है। दरअसल मुकुल जी अपनी कविताओं के माध्यम से समाज के प्रति सोच रखने के साथ ही उन्नति के बीच नैतिक मूल्यों और समृद्धशाली परंपरा को बचाने के लिए भी चिंतित नजर आते हैं, और यह उनकी कविताओं को सामान्य से बिल्कुल अलग खड़ा करती है।

लक्ष्मीकांत मुकुल ग्रामीण-कस्बाई इलाके में रहने वाले गंभीर साहित्यकार, समर्पित भाषासेवी अध्येता हैं। वैसे तो यह मूलतः हिन्दी और भोजपुरी साहित्य के आदमी हैं। जैसा कि इस काव्य संग्रह में 75 कविताएं शामिल हैं, इनमें चार भोजपुरी कविताएं भी हैं। 'भरकी में चहुंपल भईसा' लंबी कविता में चार कविताओं को शामिल कर कवि अपने भोजपुरी प्रेम को स्पष्ट रूप से जाहिर कर रहे हैं। शीर्षक कविता 'घिस रहा है धान का कटोरा' संग्रह की सबसे महत्वपूर्ण कविता है। यह कविता कुल 17 खंडों में तैयार की गई है, जो कवि की विशाल व उदात्त कल्पनाशीलता को प्रमाणित करती है। साहित्य व इतिहास का संबंध मानव जीवन एवं समाज से जुड़ा हुआ है। मानव जीवन है तो साहित्य है और समाज है तो उसका इतिहास भी कुछ ना कुछ रहा है। यह स्पष्ट है कि पुराना शाहाबाद यानि भोजपुर, बक्सर, रोहतास और कैमूर जिलों का यह इलाका धान की पैदावार के लिए मशहूर रहा है। शायद इसलिए यह इलाका धान के कटोरे के रूप में विख्यात रहा है। हालांकि कवि ने कृषक-श्रम प्रधान इन इलाकों में धान की खेती को निकट से महसूस किया है, इसके बावजूद वे कृषकों की समस्याओं और हाल-फिल हाल आ रही दुश्वारियों को समझकर उन्होंने बाजारवादी व्यवस्था में किसानों की परंपरा को खतरे में देख धान के कटोरे को घिसते हुए देख रहे हैं, महसूस कर रहे हैं। इन क्षेत्रों में समय के साथ साहित्य का स्वरूप बदला है। कवि संग्रह को शोधपरक दृष्टि से बनाये हैं। उन्होंने इन क्षेत्रों की सामाजिक, आर्थिक-राजनैतिक माहौल की पड़ताल करती कविताओं को पेश किया है।

इस संग्रह में वैसे तो कुल 75 कविताओं को शामिल किया गया है, जो अपनी विविधता और तारतम्यता के साथ पाठकों को बांधकर रखने में सक्षम दिखती है। कविताओं में सहज-सरल भाषा और शब्दावली का प्रयोग हुआ है, इससे काव्यगत बोध रखते हुए संग्रह कहीं से बोझिल नहीं लगती। एक ओर शीर्षक कविता में 17 उप कविताएं शामिल हैं तो भोजपुरी कविता में भी चार उप कविताएं शामिल हैं। इसी तरह कोरोना- काल को केंद्रित कविता 'कोरोनाकाल की जख्में टीसती हैं भगेलुआ को' में पांच उप कविताएं शामिल हैं, तो कविता 'यादों में वसंत का प्यार' में भी चार उप कविताएं शामिल की गई हैं। एक दो और कविताएं हैं जैसे कि 'मां' और 'युद्ध' शीर्षक कविताओं में भी तीन-तीन उप कविताएं हैं। एक और कविता है 'कोयल' शीर्षक से है, इस कविता में भी कुल पांच उप कविताएं हैं। इस हिसाब से संग्रह में कुल 111 कविताएं शामिल हैं।

इस काव्य संग्रह में कुछ लंबी कविताएं भी शामिल हैं, जो कवि की रचनाशीलता और उनके कविकर्म के वैविध्य धर्म निर्वहन को प्रमाणित करता है। कई कविताएं लंबी होने के बावजूद बोझिल नहीं लगती हैं। जैसे कि संग्रह की पहली कविता 'छोटी लाइन की छुक-छुक गाड़ी' ही एक लंबी कविता है, जैसे कि कवि अपने बचपन की यादों को समेटते हुए पुराने शाहाबाद के आरा-सासाराम लाइट रेललाइन के सहारे पुरानी स्मृति को कविता के माध्यम से परोसा है। साहित्यिक पुट से लबरेज कविता पाठकों को अंत तक पढ़ने के लिए विवश करती हैं। कवि शब्दों के सहारे औपनिवेशिक काल में शाहाबाद के शौर्यपूर्ण गौरवशाली इतिहास और उस दौर में यातायात के प्रमुख साधन के रूप में छोटी रेललाइन को विस्तार से सामने रखने में सफल रहे हैं। इसी तरह एक और लंबी कविता 'फिर लौटकर आएगा बुकानन' में कवि कविता के बहाने शाहाबाद के इतिहास को एक बार फिर से टटोलने की कामयाब कोशिश करते हैं। विदित हो कि ईस्ट इंडिया कंपनी की विश्वप्रसिद्ध खोज-यात्रा ब्रिटीश सर्वेयर फ्रांसिस बुकानन के नेतृत्व में हुई थी। यह यात्रा 1812-13 में हुई थी। इस यात्रा में शाहाबाद के कई ऐतिहासिक स्थलों के बारे में प्रमाणिक जानकारी सामने आई थी।

इस मामले में कुछ लंबी कविताएं अपने भाव संप्रेषण में असफल नजर आती हैं। जैसे कि 'देखना फिर से शुरू किया दुनिया को' में कवि प्रेयसी के सहारे शब्दों को रचते-बुनते आगे तो बढ़ते हैं लेकिन कविता के अंत में बिखराव नजर आता है। इसी तरह एक और कविता 'बाइसवीं सदी में' में कवि कल्पनाशीलता में आधुनिक तकनीकी विकास को नकारते हुए दिखते हैं। हालांकि यह उनके नजरिये और विचारधारा से जुड़ी हुई होती है। जो कि कई कविताओं में स्पष्ट रूप से अपना प्रभाव छोड़ती नजर आ रही है। बावजूद काव्य संग्रह में कई ऐसी कविताएं भी शामिल हैं जो सभी वय के लोगों को पसंद आएंगी। इन्हीं में से एक कविता 'अयोध्या में परदादी की धर्मशाला कहां है?' कविता रोचक होने के साथ ही सामयिक बन पड़ी है। इस तरह एक और कविता 'घना बरगद थे लोहिया जी' में कवि ने अपने शब्दों में लोहिया जी के विशाल व्यक्तित्व के अक्स को खींचने की पूरी कोशिश की है। कवि प्रकृति से जुड़ी तमाम नदी, नाले, पहाड़, जलधारा, कोयल, आदि तमाम सजीव-निर्जीव वस्तुओं को केंद्र में रखकर कविताएं रचते हैं। उनकी कई कविताएं तो संबंधित मिथकीय संदर्भों से उद्धृत होती हैं। जिससे उनकी प्रमाणिकता सत्य की कसौटी पर और बढ़ती जाती है।

दरअसल लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताएं यथार्थ के धरातल पर एक पुख्ता जमीन तैयार करती हुई आमलोगों के जनजीवन से गुजरती हुई प्रतीत होती हैं। कवि का लोक-जीवन और लोक-परंपरा से गहरा जुड़ाव कविताओं को और खास बना देता है। उनकी कविताओं के विषयवस्तु यहां के निवासियों की केवल गतिविधियां ही नहीं होती, बल्कि धार्मिक क्रियाकलाप, सामाजिक गतिविधि, आर्थिक लेनदेन की प्रक्रिया, स्थापत्य के तत्व और स्मारक भी होते हैं। यदि इस नजरिये से देखेंगे तो कवि कई बार उनके बीच होते हुए काव्य की संवेदना से आपको परिचित कराता है। ग्राम्य संस्कृति के वाहक के रूप में कवि हिन्दी और भोजपुरी दोनों भाषाओं को एकसमान दृष्टिकोण से देखते हैं। सबसे खास बात कि उनकी कविताओं में कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग भी हुआ है, जिनका इस्तेमाल इन दिनों या तो बंद हो गया है, या काफी कम हो रहा है। जैसे कि 'गूंगी जहाज' कविता में कवि बालमन की स्मृति को उकेरते हुए बताया है कि भोजपुरी अंचल में मालवाहक जहाजों को गूंगी जहाज कहा जाता है। बच्चे इसे खास तौर से देखते-निहारते हैं। इसी तरह नचदेखवा, गोहराना और सुआ-सुतरी जैसे दुर्लभ शब्दों के प्रयोग से कवि ने संग्रह को खास बना दिया है।

काव्य संग्रह में भोजपुरी की वैसे तो एक ही कविता है, 'भरकी में चहुंपल भईंसा', कहने को इस एक कविता में कुल चार कविताएं शामिल हैं, सभी कविताएं लंबी जरूर हैं, लेकिन अपनी शिल्प विधा से ये सभी कविताएं लोक के बेहद करीब नजर आती हैं। इन कविताओं में कवि ने भोजपुरी के उन देसज और लोक से जुड़े जमीनी शब्दों का प्रयोग किया है, जिनका प्रयोग अब नहीं के बराबर हो रहा है। इस तरह के शब्दों का प्रयोग सामान्यता आमलोग तो दूर कवि-साहित्यकार भी नहीं कर रहे हैं। अपने पाठकों की सुविधा हेतु कवि ने कुछ विलुप्त हो रहे भोजपुरी शब्दों के शब्दार्थ भी संग्रह के अंत में दे दिये हैं। 'भरकी', 'खरमेंटाव', 'बियाछत', 'उखमंजलन', 'लुकार', 'खोभार', 'पेहान', 'गंवलेहर', 'मटीगर', 'भकसावन' और 'गोड़ार' आदि इन शब्दों के प्रयोग से कवि ने साबित किया है कि इन शब्दों का प्रयोग वह अपने दैनिक जीवन में रोज देखते रहे हैं। इसलिए इनका प्रयोग भी वे स्वाभाविक रूप से अपनी कविताओं में करते हैं। यहीं नहीं कविताओं में कवि कुछ नए शब्दों का इजाद भी करते हैं, जैसे कि 'चमकउआ' मतलब चमकने वाला, 'कवलेजिहा' माने कॉलेज जाने वाली, 'इसकोलिहा' मतलब स्कूल जाने वाला या फिर 'बजरूआ' मतलब बाजार के प्रभाव में। इस तरह के नए और देसज शब्दों के प्रयोग से उनकी कविताएं सहज में ही और भी आकर्षक हुई हैं।

वैसे तो कवि को अपने कविताओं के विषय में ठोस जानकारी है, या यूं कहे कि वे इन कविताओं के माध्यम से अपने आस-पड़ोस और व्यक्तिगत जीवन के विभिन्न पहलुओं को शब्दों में पिरोया है। बावजूद वे कई जगहों पर कविताओं को अनावश्यक रूप से विस्तार देते हुए नजर आ रहे हैं, हालांकि कवि की विद्वता या उनकी कल्पनाशीलता इतनी विशाल है कि कविताओं में भटकाव के बाद भी प्रवाह जारी रखने में सफल रहते हैं, लेकिन काव्य शैली के दृष्टिकोण से कई बार लंबी कविताएं पाठकों से तारतम्य बनाने में सफल हो पाएं, इसमें संदेह होता है। हालांकि कवि की संवेदनशीलता व समाज के प्रति गहनशीलता उनकी कविताओं को सहज और सरल रूप से ग्राहय बनाती है। वे अपनी कविताओं में मां-पिता से लेकर दादा-दादी, कृष्ण -राधा के प्रेम से लेकर लोहिया-बापू को भी याद करते हैं। कविताओं को कथ्य शैली में प्रस्तुत करना, उन लोगों को याद करना, कवि की विशिष्ट शैली को दर्शाता है। कवि ने संग्रह में प्रेम से जुड़ी कई कविताओं को प्रस्तुत किया है। 'यादों में वसंत का प्यार', 'हरेक रंग में दिखती हो तुम' एवं 'देखना फिर से शुरू किया दुनिया को' सहित कुछ और कविताएं भी हैं जो कवि के प्रेममयी दिल के बहुत ही करीब नजर आती है।

अपने मूल राज्य बिहार को लेकर कवि की संवेदनाएं काफी गहरी दिखती रही हैं। 'बिहारी', 'दिल्ली की सड़कों पर किसान' एवं 'पंचायत चुनाव में गांव' आदि कविताओं में कवि ने अपने राज्य के किसानों, वंचितों, मजदूरों और चुनाव में होने वाले तिकड़मबाजियों को भी शब्दों में पिरोया हैं। इसी तरह बिहार के नियोजित शिक्षकों को लेकर लिखी गई कविताएं उल्लेखनीय हैं। 'नियोजित शिक्षक' व 'अवकाश पाये शिक्षक' कविताएं कवि के विशाल उद्यमशीलता और समाज के गहन अन्वेषण का प्रमाण है। पूर्ण संतोष की बात है कि कवि ने अपने संग्रह में शामिल कविताओं में सिर्फ अभिव्यक्ति भर नहीं है, बल्कि उनकी कविताएं शाहाबाद इलाके की सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक पहलुओं का पुख्ता प्रमाण भी प्रस्तुत करती हैं। कवि के अनुसार वहां के जीवन में कठिनाइयां हैं, दुश्वारियां हैं, समस्याएं हैं तो उनका समाधान भी यहीं पर उपलब्ध है। कवि कविता के माध्यम से अपनी संवेदना के साथ ही अपनी रचनाधर्मिता व लगनशीलता को रखने में सफल दिखते हैं।

संग्रह में कवि कई कविताओं के माध्यम से लोक-परंपरा और लोक-जीवन के प्रतिबिंब को रखते हुए यह साबित करते हैं कि कवि केवल अभिव्यक्ति के लिए नहीं, बल्कि आत्मसंवेदना के स्तर पर भी पाठकों को प्रभावित करते है। कारण कि उनकी कविताओं में तत्कालीन शाहाबाद के गांव, कस्बों, बाजारों और छोटे -बड़े शहरों की आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति के बारे में पता चलता है। दरअसल क्षेत्र विशेष की जानकारी देते हुए कवि कविताओं के माध्यम से वहां की भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक व धार्मिक स्थलों के बारे में जानकारी देने के साथ ही लोक जीवन की गहरी लकीरों को प्रस्तुत करने में कामयाब दिखते हैं। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि लक्ष्मीकांत मुकुल की अध्ययन शैली बहुत साफ-सुथरी और सारगर्भित है। अपने काव्य लेखन में इतिहास की गहरी समझ रख साहित्यिक शैली में काव्य संग्रह को प्रस्तुत किया है। इस संग्रह के माध्यम से लोक-जीवन को केंद्र में रख कवि ने काव्य लेखन के लिए एक नई लकीर खींची है। लोक-जीवन पर गहरी पकड़ के साथ लिखी गई कविताएं अपने पाठकों को सहज ही आकर्षित करेगी। ग्रामीण जीवन की गहन अध्ययनशीलता कवि के मनोयोग और लोक-संस्कृति के अध्ययन के लिहाज से यह काव्य संग्रह काफी संग्रेषणीय और प्रभावशाली है। जो पाठकों के काव्यगत समझ को और बेहतर करेगी।

लक्ष्मीकांत मुकुल के हाइकु

जितेंद्र कुमार

हाइकु जेन संतों की कविता है । बौद्ध धर्म ने भारत से चीन की यात्रा की और वहां से जापान की। बौद्ध धर्म की परंपरा में अध्यात्मिक ध्यान का बहुत महत्व है। चीनी भाषा में ध्यान को चान कहते हैं । चान जब चीन से जापान गया तो झेन हो गया । जापानी शब्द झेन जब अंग्रेजी साहित्य के संपर्क में आया तो जेन (अंग्रेजी :ँह) हो गया । अंग्रेजी साम्राज्य से प्रभावित भारतीय मानस के लिए भी झेन जेन के रूप में स्वीकृत है। शब्द जब देश और काल की यात्रा करते हैं, तब अपना रूप बदल लेते हैं।

हाइकु ध्यान और साधना की कविता है जापान में । किसी क्षण विशेष की सघन अनुभूति की कलात्मक प्रस्तुति है हाइकु । सत्रहवीं सदी में हाइकु को काव्य विधा के रूप में जापानी संत मात्सुओ बासो (1644 से 1694 ईस्वी) ने स्थापित किया था या, कहिए प्रतिष्ठित किया । ध्यान और साधना के चरम छणों में विचार, चिंतन और उसके निष्कर्ष की सौंदर्यानुभूति और भावानुभूति को संत कवि ने प्राकृतिक बिंबों में व्यंजित किया । उन्होंने प्रकृति को माध्यम बनाकर मनुष्य की भावनाओं को तीन सार्थक पंक्तियों में शब्द दिया । पहली पंक्ति 5 अक्षरों की, दूसरी 7 अक्षरों की और तीसरी 5 अक्षरों की। मात्र सत्रह शब्दों में एक सार्थक काव्यात्मक भावबोध।

भारतीय भाषाओं में सर्वप्रथम नोबेल पुरस्कार प्राप्त कवि रविंद्र नाथ ठाकुर ने जापान यात्रा से लौटने के पश्चात सन 1919 में 'जापानी यात्री' में हाइकु छंद की चर्चा की और बंगला में दो जापानी हाइकु का अनुवाद किया । हिंदी साहित्य में हाइकु छंद की कविताओं का भरपूर स्वागत हुआ है।

युवा कवि लक्ष्मीकांत मुकुल की 30 हाइकु कविताएं मेरे सामने हैं। उनकी पहली कविता जैन दर्शन का अतिक्रमण करती है, वह किसी ध्यान या साधना की अनुभूति को व्यंजित नहीं करती। बल्कि मनुष्य के सामने वैश्विक चुनौती के रूप में फैले कोरोना संक्रमण को कविता के विषय के रूप में पेश करती है-

पांव पसारा
कोरोना का पिचास
बंद जिंदगी !

प्रकृति का प्रकोप मनुष्य को जरा भी संभल ने का अवसर नहीं देता। चाहे वह अंडमान निकोबार में आई सुनामी तूफान की ऊंची ऊंची लहरे हों या लातूर का भूकंप। कोविड-19 के संक्रमण से दुनिया के लाखों मनुष्य और असमय काल कवलित हो गए । वे चौथी कविता में कोरोना को 'पिषाच जैविक अस्त्र ' के रूप में व्यंजित करते हैं। कवि में तटस्थ राजनीतिक चेतना है। उनकी ज्ञानात्मक संवेदना कोरोना संकट को जैविक के अस्त्र के रूप में परखती है। उनका अनुभव संसार ग्रामीण संवेदना से संपृक्त है। अपनी कविता के लिए हुए खेती किसानी और गांव देहात से सटीक जीवंत ताजा बिंबों के माध्यम से व्यंजित करते हैं । कोरोना काल में कृषि कर्म बाधित है। जिन खेतों में कंकड़ पत्थर होते हैं, उसमें खेती करने में परेशानी होती है। एक हाइकु है -

उगा पहाड़
खेतों के आंगन में
पाथल टीला

सांस्कृतिक परंपराओं को निभाना मुश्किल है। वसंत आया है, लेकिन मन उदास है । युवा कवि लक्ष्मीकांत मुकुल कोरोना संकट को प्रेम के शिल्प में व्यंजित करते हैं -

लगा है जाब
सूंघने चूमने पे
उदास भौरें

रूठी हो तुम
कोरोना के भय से
छू न सका हू

लहराया है
तीसी - फूलों - सा तेरा
नीला आंचल

कभी पहली कविता में 'पिचास ' (संस्कृत : पिशाच) और एक अन्य कविता में 'जाब' शब्द का अनूठा प्रयोग करते हैं । भोजपुर की ग्रामांचलों में आम लोग भूत-प्रेत के लिए 'पिचास' शब्द का प्रयोग करते हैं । इसी तरह दुधारू गाय भैंसों के नवजात बच्चों के मुंह में 'जाब' लगाकर रखते हैं, जिससे कि वह मिट्टी नहीं चाट सके। पहले दौनी के समय बैलों के मुंह में जाब लगाया लगा दिया जाता था , जिससे कि वह अनावश्यक दाना खाने में संलग्न नहीं हो जाए । कवि उस ग्रामीण परिवेश से अपनी कविता का बिंब चुनते हैं। यह नकली नहीं है । बल्कि उनकी काव्य भाषा को संप्रेषणीय और जीवंत बनाते हैं।

युवा कवि लक्ष्मीकांत मुकुल आशा और जिजीविषा के कवि हैं। कोरोना संकटकाल में भी कवि की दृष्टि खेतों धान /मकई की आतुर बालों से सिवान को ढका पाती है। शिरीष के पके फल बीते युग (कोरोना - काल) की खंजड़ी बजा रहे हैं , यहां तक कि बकुल झुंड पंक्ति बद्ध होकर नभ उड़ चले हैं , कवि के सपने खरहे की तरह फुदकते हैं ; एक नया अरुणोदय हुआ है; समय का धुंधलका बीत चुका है पूर्व क्षितिज पर लाली एक नये विहान का संकेत करती है-

आतुर बालें
निकली हैं खेतों में
ढका सिवान ।

शिरीष-फल
बजा रहे खंजडी
बीते युग की ।

बीत चुका है
समय धुंधलका
उगी है लाली

युवा कवि हाइकुकार लक्ष्मीकांत मुकुल ने अपने लिए अपने अनुभव संसार से संतुलित काव्य भाषा सृजित कर ली है। वे अपने कहन के लिए ग्राम्य - जीवन से ताजा काव्य बिंबों को चुनने और इस्तेमाल करने में समर्थ हैं।

संपर्क सूत्र :
मोबाइल नंबर - 99 311 71 611

साहित्य और इतिहास का संगम है 'यात्रियों के नजरिये में शाहाबाद'

डॉ. राणा अवधूत

लक्ष्मीकांत मुकुल की नई किताब 'यात्रियों के नजरिये में शाहाबाद' ग्रामीण परिवेश में रची-बुनी गई ग्रामीण इतिहास पर आधारित एक प्रमाणिक पुस्तक है। हिन्दी और भोजपुरी भाषा-साहित्य के लिए समर्पित भाव से सृजनकार लक्ष्मीकांत मुकुल इस किताब के जरिये एक मंजे हुए इतिहासकार के रूप में नजर आते हैं। वैसे किताब का टाइटल 'यात्रियों के नजरिये में शाहाबाद' अपने आप में इतना आकर्षक है, कि साहित्य के प्रेमी इसे पढ़ने से नहीं चूकेंगे। सच कहे तो प्रथम दृष्टया ही यह किताब पाठकों को इतिहास के झरोखा से गुजारते हुए साहित्य के रस में भी भिंगोने में सफल दिखता है। धर्म का इतिहास से जुड़ाव को प्रमाणित करते हुए लेखक दिनारा के प्रसिद्ध देवीस्थल भलुनी गांव व धाम के लोक इतिहास और देवी मंदिर के कई मिथकीय संदर्भों से परिचित कराते हैं। भलुनी धाम की महत्ता को यह किताब आधारभूत तथ्य दे रही है।

रोहतास जिला के दिनारा निवासी लक्ष्मीकांत मुकुल पेशेवर रूप से खेती और किसानी का काम करते हुए साहित्यिक रचनाधर्मिता में गतिशील बने रहते हैं। यह पुस्तक एक ओर साहित्यिक पुट के साथ इतिहास की जानकारी देती है, वहीं दूसरी ओर शिक्षार्थियों और शोधार्थियों के लिए ज्ञानवर्द्धक किताब के रूप में सामने आती है। इस पुस्तक में रोहतास जिला के एक प्राचीन प्रखंड दिनारा के इतिहास को रेखांकित करते हुए औपनिवेशिक काल में यहां की प्रतिरोधी चेतना को विस्तार से जानकारी है। किताब को पढ़ने से रोहतास जिला और विशेष रूप से दिनारा प्रखंड और आसपास के इलाकों में पुराना शाहाबाद के विभिन्न गांवों की भौगोलिक-सामाजिक-राजनैतिक-आर्थिक और धार्मिक गतिविधियों और तत्कालीन रहबासियों के रूझानों को जानने-समझने में मदद मिलती है। इसमें गांवों की सभ्यता-संस्कृति और परंपरा, रीति- रिवाजों को भी पढ़ने-जानने वालों के लिए काफी कुछ है। दरअसल यह किताब पुराना शाहाबाद के ग्रामीण समाज और इतिहास को समझने के लिए बेहतरीन किताब है। आगे यह संदर्भ पुस्तक के रूप में सहायक सिद्ध होगी।

लक्ष्मीकांत मुकुल एक ग्रामीण-कस्बाई इलाके में रहने वाले गंभीर साहित्यकार समर्पित भाषा-सेवी अध्येता हैं। वैसे तो यह मूलतः हिन्दी और भोजपुरी साहित्य के आदमी हैं। लेकिन इतिहास लेखन में इनकी गहरी रूचि रही है। साहित्य और इतिहास का संबंध मानव के जीवन और समाज से जुड़ा हुआ है। मानव जीवन है तो साहित्य है और समाज है तो उसका इतिहास भी कुछ ना कुछ रहा है। समय के साथ साहित्य का स्वरूप बदलता है। इसी तरह समाज का इतिहास भी बदलता है। मुकुल जी ने अपनी किताब को शोधपरक दृष्टि से तैयार किया है। तभी इसमें इतिहासकार की दृष्टि से लेखक ने अपनी यायावरी प्रवृत्ति के मुताबिक किसी तथ्य पर देख-सुनकर नहीं, बल्कि यथासंभव उनका भौतिक सत्यापन और विश्लेषण करने के बाद ही लिखते हैं। ग्रामीण इतिहास पर अध्ययन करने वाले शोधार्थियों के लिए पुस्तक मागदर्शन का काम करेगी।

इस पुस्तक को छोटे- बड़े कुल पांच अध्यायों में बांटकर लिखा गया है, जो तारतम्यता के साथ अपने पाठकों को बांधकर रखने में सक्षम दिखती है। आलेखों में सहज-सरल भाषा और शब्दावली का प्रयोग हुआ है, इससे ऐतिहासिक बोध रखते हुए भी किताब कहीं से बोझिल नहीं लगती है। साहित्य से लबरेज फैंटेसी उपन्यास की तरह पाठकों को अंत तक पढ़ने के लिए विवश करती हैं। पहले आलेख में 'औपनिवेशिक काल में दिनारा क्षेत्र और उसकी प्रतिरोधी चेतना' में दिनारा के शौर्यपूर्ण गौरवशाली इतिहास को विस्तार से सामने रखने में लेखक सफल रहे हैं। जिला मुख्यालय सासाराम से करीब 30 किलोमीटर दूर उत्तर दिशा में बसा दिनारा का अतीत गौरवगाथाओं से परिपूर्ण रहा है। इसका जिक्र आईने अकबरी से लेकर टोडरमल के भू- राज व्यवस्था में भी शामिल था। ईस्ट इंडिया कंपनी की विश्वप्रसिद्ध खोज-यात्रा में भी दिनारा की चर्चा है। अंग्रेज सर्वेयर फ्रांसिस बुकानन के नेतृत्व में हुई यह यात्रा 1812-13 में पूरी हुई थी। उस समय करंज थाने की स्थापना हो गई थी। करंज थाना के क्षेत्राधिकार में दिनारा एवं दनवार परगनों के सभी क्षेत्र शामिल थे।

यात्रा विवरण में औपनिवेशिक काल के दिनारा क्षेत्र के बारे में काफी महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। उस दौर में बुकानन ने अपनी यात्रा-क्रम में सूर्यपुरा, करंज, कोआथ, बहुआरा, बड़हरी, दनवार, धरकंधा, शिवगंज, दिनारा, कोचस, दावथ, भलुनी, आदि गांवों का जिक्र किया हैं। घने जंगलों में स्थित भलुनी देवी मंदिर को उसने एक अति महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल माना है। दिनारा क्षेत्र के प्रमुख धार्मिक स्थलों में भलुनी धाम मंदिर, धरकंधा का दरिया मठ, खास का चंदन-शहीद, देवढ़ी का शिवमंदिर, सिमरी का महावीरी झंडा, कड़सर का सोखा धाम और ठोरा नदी के संबंधित मिथकीय संदर्भों से अनेक दंतकथाएं और कहानियां लोककथाओं से उद्धृत होती हैं। बुकानन के सूर्यपुरा से भलुनी धाम, कोआथ से करंज, कोचस और कोनडिहरा से बहुआरा की यात्रा, दिनारा से करंज और कोचस-सूर्यपुरा और नटवार की यात्राओं का आंखों-देखी उसकी डायरी से मिलती है। इसके आधार पर हम उन स्थलों की पूर्व की स्थिति से वर्तमान हाल की तुलना कर आज के युग मे विकास के लिए मॉडल या मानकों का मूल्यांकन कर सकते हैं, इससे विकास का मार्ग प्रशस्त होगा।

पुस्तक के दूसरे लेख 'यात्रियों के नजरिये में शाहाबाद' में इस भू-खंड मे प्रवास किये लोगों की यात्राओं को फोकस किया गया है। यात्रियों के यात्रा-विवरण के विषयवस्तु वहां के निवासियों की केवल गतिविधियां ही नहीं होती, बल्कि धार्मिक क्रियाकलाप, सामाजिक गतिविधि, आर्थिक लेनदेन की प्रक्रिया, स्थापत्य के तत्व और स्मारक भी होते हैं। यदि इस नजरिये से देखेंगे तो दिनारा-रोहतास में यात्रा की शुरूआत चीनी यात्री ह्वेनसांग सबसे पहले आया। मुगल सल्तनत के संस्थापक बाबर अपनी बाबरनामा' में शाहाबाद के उत्तरी भाग में अपनी छावनी डालने और आरा से गुजरने का जिक्र है। ईरानी यात्री अब्दुल लतीफ आगरा स्थित राजमहल की यात्रा के वृत्तांत के दौरान चौसा और सासाराम से गुजरने के दौरान इस इलाके की चर्चा की है। यूरोपीय यात्री जीम वापरिस के पटना यात्रा के दौरान शाहाबाद के सासाराम और दुर्गावती से गुजरने की चर्चा है। इसी तरह अंग्रेज चित्रकार थॉमस डेनियल और विलियम्स डेनियल बंधुओं द्वारा शाहाबाद क्षेत्र के कई ऐतिहासिक-धार्मिक स्थलों के मनमोहक चित्र बनाये गये हैं। इसमें सासाराम के शेरशाह रौजा का तालाब, नवरतन किला, शहर से सटे स्थित धुआंकुंड व मांझरकुंड, रोहतासगढ़ का किला, भगवानपुर स्थित मुंडेश्वरी मंदिर का शिखर, शेरगढ़ का किला, रामगढ़ का किला और मंदिर के चित्र हैं। शाहाबाद में भ्रमण करने वाले यात्रियों में फ्रांसिस बुकानन हेमिल्टन एक बड़ा नाम है। वह एक उच्च कोटि के अन्वेषक थे।

किताब में तीसरा लेख 'शिया मुस्लिम द्वारा प्रारंभ सिमरी का महावीरी झंडा' है। इसके माध्यम से लेखक ने इस क्षेत्र में कौमी एकता की परंपरा को स्थापित करने की सफल कोशिश करते हैं। रोहतास के दावथ प्रखंड स्थित सिमरी गांव में सामाजिक-धार्मिक समरसता का एक अद्भुत नमूना देखने को मिलता है। जहां दशहरा में महावीरी झंडा उठाने की प्रथा एक शिया मुस्लिम द्वारा करीब 110 साल पहले शुरू की गई थी। जो आज तक बदस्तूर जारी है। मुस्लिम समाज द्वारा हिन्दू देवी-देवताओं और धार्मिकग्रंथों के प्रति सम्मान की भावना के कई उदाहरण देखने को मिलता है, जिसमें रामभक्त हनुमान के प्रति आदर की भावना सबसे प्रबल मिलती है। हनुमान के प्रति मुस्लिमों द्वारा प्रकट किए गए सम्मान-समर्पण का व्यापक रूप से विवरण कल्याण के हनुमान अंक में मिलता है। जिमसें लखनउ के तत्कालीन अवध के नवाब मुहम्मद अली शाह की बेगम रबिया ने संतान प्राप्ति के लिए स्वप्न-दर्शन के आधार पर इस्लामबाड़ी में हनुमान मंदिर बनवाया था। दरअसल सिमरी गांव में बसा शिया मुस्लिम परिवार कोआथ के नवाब परिवार से जुड़ा रहा है। कोआथ के नवाब नुरूल हसन के परिवार और उनकी जमींदारी का विस्तार से उल्लेख बुकानन द्वारा शाहाबाद के सर्वेक्षण रिपोर्ट में मिलता है। इनके पुरखे शुजाउद्दौला की फौज में विंग कमांडर थे। कोआथ-सिमरी गांव की मशहूरी उस दौर में इन्हीं संपन्न मुस्लिम परिवारों और उनकी कोठियों के कारण थी। उनका खान-पान, रहन-सहन, चाल-चलन, व्यवहार, तत्कालीन समाज में समरसता एवं बराबरी के लिए प्रतिबद्ध दिखता है।

इस पुस्तक के चौथा आलेख 'बक्सर में गंगाः अतीत से वर्तमान तक' में गंगा नदी के विस्तार और इसके धार्मिक-सामाजिक महत्व को रेखांकित किया गया है। गंगाजल को सबसे पवित्र और निर्मल माना गया है। गंगातट पर बसे बक्सर के आध्यात्मिक-धार्मिक महत्व एवं गंगा से जुड़ाव को लेखक ने अपने अकाट्य तर्क और तथ्यों से प्रमाणित किया है। बक्सर एवं गंगातट के पुराने चित्रों को आधार बना लेखक ने लिखा है कि प्राचीन काल में बक्सर के गंगातट निर्मलता, सहजता और प्राकृतिक छवियों के प्रतिबिंब थे। यह जहाजियों के लंगर, जलमार्ग की आवाजाही के साथ धार्मिक-सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र था। नावों की शोभायात्रा को देखने वाले दर्शनार्थियों की भारी भीड़ साबित करती है कि 200 साल पहले भी बक्सर में तीर्थयात्रियों की संख्या कम नहीं थी। इसके साथ लेखक ने बक्सर क्षेत्र में लगने वाले कई ऐतिहासिक-धार्मिक महत्व के मेलों के बारे में काफी जानकारी दी है। इसमें संक्रांति मेला, पंचकोशी मेला व श्रीराम विवाह मेला प्रमुख है।

इस किताब का पांचवा लेख 'ग्रामीण इतिहास की समझ' इस पुस्तक की आत्मा है। शाहाबाद के ग्रामीण इतिहास को जानने-समझने के लिए यह संदर्भग्रंथ साबित हो सकती है। इतिहास में रूचि रखने वाले लोग, खास तौर पर ग्रामीण इतिहास में, उनके लिए यह पुस्तक बहुपयोगी है। इस किताब से एक ओर इतिहास को जानने-समझने की एक नई समझ मिली है, तो वहीं दूसरी ओर साहित्य और इतिहास के बारीक संबंधों को अध्ययन करने का मौका है। किताब के माध्यम से लेखक ने इतिहास के क्षेत्र में बिल्कुल ही नया प्रयोग किया है। उन्होंने पूरे किताब में कहीं भी जरूरी इतिहास बोध को लेखन से अलग नहीं होने दिया। बड़े ही खुबसूरती से इतिहास की नई व्याख्या करते हुए तमाम तथ्यों और संदर्भों को सहेजते हुए एक इतिहासकार के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। साहित्यिक मिजाज में लिखी गई किताब एक व्यवस्थित इतिहास के रूप में सामने आई है। जिसमें लेखक अपने अंदर के अंर्तविरोधों के बावजूद वैसे तथ्यों को समाहित किए हैं, इससे ग्रामीण इतिहास की समझ व्यापक क्षेत्र के इतिहास की अपेक्षा केंद्रभूत होती है। यह विशालता से सूक्ष्मता की ओर की यात्रा है। इस मामले में लेखक ने अपनी इतिहास दृष्टि से बार-बार संकेत किया है।

किताब का आखिरी आलेख 'शाहाबाद गजेटियर का महत्व' अपने आप में खास है। कारण कि शाहाबाद गजेटियर से तत्कालीन शाहाबाद के गांव, कस्बों, बाजारों और छोटे-बड़े शहरों की आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति के बारे में पता चलता है। दरअसल गजेटियर प्रकाशित करने की परंपरा ब्रिटीश शासनकाल में प्रशासकीय दृष्टि को ध्यान में रखकर अधिकारियों को क्षेत्र विशेष की जानकारी देने के लिए शुरू हुई थी इसमें क्षेत्र विशेष या जिले का भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक और धार्मिक स्थलों के बारे में जानकारी के साथ ही सरकारी गतिविधियों की मोटा-मोटी जानकारी रहती थी। इससे अंग्रेज अधिकारियों को शासन की व्यवस्था को सुचारू ढ़ंग से चलाने में सहूलियत होती थी। किसी क्षेत्र विशेष के बारे में जानने-समझने के लिए गजेटियर का अध्ययन बहुत जरूरी होता है। यदि इतिहास की सूक्ष्म जानकारी लेनी है, किसी क्षेत्र में शोध करना है तो पुराने गजेटियर कितना सहायक होगा, यह लेखक ने स्पष्ट रूप से प्रमाणित किया है। विदित हो कि भारतीय इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाला बिहार का पुराना शाहाबाद जिला आज के समय में प्रशासनिक दृष्टि से चार नए जिलों में विभक्त हो चुका हैः भोजपुर(आरा),रोहतास (सासाराम), बक्सर व कैमूर(भभुआ)।

कुल मिलाकर कह सकते हैं कि लक्ष्मीकांत मुकुल की अध्ययन शैली बहुत साफ-सुथरी और सारगर्भित है। अपने लेखन में इतिहास की गहरी समझ रखते हुए साहित्यिक शैली में अपनी किताब को प्रस्तुत किया है। यह किताब आने वाले समय में शाहाबाद के इतिहास की जानकारी रखने वाले के लिए बहुलाभकारी साबित होगी। किताब के माध्यम से उन्होंने क्षेत्रीय इतिहास लेखन के लिए एक नई लकीर खींची है। संदर्भ सामग्री के रूप में यह किताब भविष्य में शोधार्थियों के लिए बहुत काम की साबित होगी। ग्रामीण इतिहास की गहन अध्ययनशीलता लेखक के मनोयोग और गांव के इतिहास से जुड़ी उनकी यह किताब लीक से हटकर है।

संदर्भ-

यात्रियों के नजरिए में शाहाबाद (ग्रामीण इतिहास)
प्रकाशक- सृजनलोक प्रकाशन, दिल्ली
पृष्ट - 98
प्रकाशन वर्ष - 2022
मूल्य - 150 /-

संपर्क सूत्र
ईमेल- ranachouhan2007@gmail.com

लक्ष्मीकांत मुकुल रचित

असम के चाय बगान

डिब्रुगढ़ से तिनसुकिया जाने वाली मेरी गाड़ी Hyndai i10 कार के ड्राइवर मोनू फूकन थे, वे डिब्रुगढ़ जिला के Bokul maj गाँव के निवासी हैं और एक मोटर एजेंसी में ड्राइविंग का कार्य करते हैं, जो सैलानियों को सुदूर अंचलों में भ्रमण कराने का काम करती है। ये एक हँसमुख , उदार और संवेदनशील व्यक्ति होने के साथ-साथ एक निपुण गाइड भी हैं, जो असम के रहन- सहन, खान - पान आदि के बारे में मुझे बताते हैं। डिब्रुगढ़ से तिनसुकिया की दूरी करीब 48 कि.मी. है। एनएच15 पर जाते हुए हम चाय बगान को देखने के लिए रुके। असम के चाय बगान दुनिया भर में मशहूर हैं। करीब कमर भर छोटे आकार के और सौ बरस तक जिन्दा रहने वाले ये पौधे अपनी तलब और हरापन के कारण मन को मोह लेते हैं। इसकी रग- पत्तियों में खुशबू भरा है। बीच-बीच में शिरीष के पेड़ छाया देते हुए, कुछेक तनों में लिपटी हुई काली मिर्च की लताएँ । असम में सैकड़ों चाय बगान हैं। जिनकी दो-तीन पत्तियों (दो पत्र व एक नया किसलय) के गुच्छे को तोड़ा जाता है और मशीनी यंत्रों द्वारा प्रोसिसिंग करके बारिक Tea lea ने का पॉकिट बांधकर चाय बोर्ड को भेजा जाता है। चाय बगान में कामगार मजदूर स्त्री पुरुष काफी संख्या में होते हैं। ये पत्तियों चुनने वाले मजदूर प्रायः बंगाल, बिहार और उड़ीसा के गरीब लोग हैं, जो कई पीढ़ियों से यहाँ रह रहे हैं। इनकी हालत बहुत खस्ती है। काफी कम मजदूरी इन्हें मिलती है, जबकि चाय बगान के मालिक सरकार को कोसते हैं कि उनके उत्पादन का न्यूनतम समर्थन मूल्य भी नहीं मिलता, ठीक धान उत्पादक किसानों की तरह ! असम के चाय बगानों का इतिहास करीब दो सौ साल पुराना है। ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारी रॉबर्ट ब्रुस ने एक असमिया व्यापारी के माध्यम से यह जानकारी पाया कि खामती/ सिंगफो जनजातियों के लोग 'सोमा' नामक पौधे की पत्तियों को पानी में खौला कर पीते हैं, जिससे उनको बड़ी ताजगी मिलती है।

उस जमाने में अंग्रेज चीन से चाय का निर्यात करते थे। उसी सोमा पौधों को विकसित करके अंग्रेजों ने चाय की खेती करना शुरू किया, जिसे Tea Garden कहा गया। चाय का पौधा लगाने के चार-पाँच साल बाद ही पत्तियाँ तोड़ने लायक होती हैं। इस पौधे को बढ़ने नहीं दिया जाता। कटाई-छटाई करके इसे ठिगना ही रखा जाता है। चाय बगानों की भूमि बगान मालिकों ने असम सरकार से लीज पर ले रखी है। स्थानीय असमवासियों के चाय के बगान प्रायः नहीं होते। बाहर की कंपनियाँ इस पर कब्जा जमायी हैं।

चाय बगानों के किनारे मजदूरों की झोपड़ियाँ थीं, जो प्रायः लकड़ी, बांस आदि से निर्मित थीं, उपरी ढाँचा प्रायः टीन की छतों का था ।

रास्ते में कुछ गाँव भी दिखाई देते थे। इकरा घर लकड़ी के बीम या बांस के स्तंभों पर टिके, दोपहले - तिपहले, दीवाले बांस की पट्टियों से बनी, उपर से मिट्टी से समान रूप से प्लास्टर की गई, मुख्य द्वार तक चढ़ने के लिए 5-7 सीढ़ियाँ, उपर टीन के छत-थोड़ी तिरछी शक्ल में- यही असमिया घर की विशेषताएँ होती हैं। काष्ठ उत्कीर्णन कला और घर के चारों ओर लकड़ी के खूबसूरत बाड़ों से सज्जित उनके घरों की नक्काशियाँ देखते ही बनती हैं। गाँव के किनारे पतले गगनचुंबी सुपारी के पेड़ मन को मोह लेते हैं, तो खजूर की तरह दिखने वाला लौंग का पेड़ अपनी छटा से आश्चर्य से भर देता है। इलाइची और लौंग मिर्च की लताएँ वृक्षों की तनों से लिपट कर अठखेलियां कर रही होती हैं। चारों तरफ हरियाली । पहाड़ से निश्चल पुरुष, वृक्ष सी वत्सल स्त्रियाँ। यहीं पर हरे रंग का सर्प मिलता है - सुग्गा सांप ! पूरे रास्ते मेरे ड्राइवर साहब मोनू फूकन मुझे यहाँ की विशेषताओं के बारे में बताते जाते हैं। मैं उनसे अहोम सम्राज्य के बारे में पूछता हूँ। वे अहोमों के गौरवशाली इतिहास के बारे में बताते हैं और कहते हैं कि मुझे धूलिया, रंगपुर, चराइदेपी आदि जगहों पर घूमना चाहिए, जो एक जमाने में अहोम राजाओं के केन्द्र थे, जहाँ उनके रहस्यमय तलातल घरों के पुरातन चिन्ह अभी भी मौजूद हैं। अहोम शासकों के वंशजों की वर्तमान स्थिति के बारे में पूछे मेरे सवाल पर उन्होंने विषय में उन्हें कोई जानकारी नहीं है, परन्तु, वे इसके बारे में पता लगायेंगे। उनके अनुसार फूकन, गोगोई, हजारिका आदि समुदाय के लोग अहोम-राज के महत्वपूर्ण अंग थे। फूकन सेनापति हुआ करते थे। मोनू फूकन ने मुझे असमिया संस्कृति में संत शंकरदेव के उपदेश और उनके प्रार्थनागृह नामघर के महत्व के बारे में भी बताया। इस तरह असम की समाजार्थिक स्थितियों पर बातें करते हुए और सड़क के दोनों किनारों की दृश्यावलियां देखते हुए हम तिनसुकिया पहुंचे।

डिब्रुगढ़- तिनसुकिया के रास्ते में एक रेलवे लाइन दिखी। मोनू फूकन ने बताया कि यह सिंगल लाइन है, जिस पर दिन में एक-दो ही गाड़ियाँ चलती हैं। सहसा मुझे याद आया कि मेरे गांव के पास के गंगाढ़ी के बालकिसुन ठकुराई किसी जमाने में इधर ही रहते थे। वे मेरे बचपन में मेरा बाल काटते हुए मुझे बताये थे कि वे डिब्रुगढ़ के पास छेछा चाय बगान में नाई का काम किया करते थे और तिनसुकिया से आगे नाहरकटिया में उनके रिश्तेदार लोग रहते थे। वे अपने जमाने में इसी रेलवे लाइन की गाड़ी पर बैठकर जाते होंगे। लोग कमाने के लिए कहाँ-कहाँ नहीं जाते हैं।पता नहीं, उस बगान में कोई उन्हें याद करता होगा कि नहीं? यह सब सोचते हुए मेरा दिल भर आया।बाल किशुन ठकुराई को चालिस बरस पहले देखा था, तब वे काफी बूढ़े हो गये थे। कितने युग बीत गये।

तिनसुकिया से नामसाई ले जाने के लिए एक दूसरी गाड़ी मेरे लिए खड़ी थी-Swarze dzier कार। इसके ड्राइवर तिनसुकिया के ही रहने वाले अनिल जी थे, जो मोनू फूकन के साथ ट्रेवलिंग एजेंसी से जुड़े थे।

इन कारों के खर्च का भार अरुणाचल सरकार का सूचना विभाग उठा रहा था, जो साहित्य महोत्सव का आयोजक था। मेरे लिए यह अच्छा संयोग था कि मेरे नये ड्राइवर भाई भी बड़े ही बातूनी और भद्र थे।

अनिल से मेरी बात बिहार की राजनीतिक स्थिति से शुरू हुई। उनका मानना था कि बिहार में जाति की राजनीति का बहुत बोलवाला है, वहाँ के नेताओं ने इसका गंदा खेल करके उस अच्छे प्रदेश को बर्बाद कर दिया है। असम विकास कर रहा है। यहाँ के लोग व्यक्ति को देखते हैं, न कि उसकी जाति को।

उनका कहना था कि अरुणाचल प्रदेश को भारत सरकार असम से बहुत ज्यादा आर्थिक सहयोग करती है, जो सामाजिक-आर्थिक प्रगति के निशान दिख रहे हैं। वह केन्द्र के पैसा के कारण हुआ है। तिनसुकिया से नामसाई की दूरी 71 कि.मी. है। रास्ते में ही अरुणाचल चेक पोस्ट पड़ा। अरुणाचल प्रदेश में प्रवेश करने के लिए डिप्पी कमिश्नर से अनुमति लेकर परमिट पास लेना होता है। अरुणाचल सूचना विभाग द्वारा मेरे प्रवेश के लिए पहले ही अनुमति ले की गई थी। बाहर से आ रहे फेस्टिवल में सभी प्रतिभागियों का एक साथ सूचीबद्ध करके। ड्राइवर ने सूची पत्र ले जाकर मेरा नाम व पारगमन पत्र पुलिस को दिखाया और समय व गाडी नम्बर रजिस्टर में दर्ज कराया। रास्ते में मुझे नोआ दिहिंग नदी मिली।

घर से लेकर खेत और खेत से लेकर लाल चोंच वाले पंछी के पीछे लगा हुआ कवि

शहंशाह आलम

कुमार अम्बुज कहते हैं, 'कवि को केवल एक चीज़ चाहिए और वह यह कि हर चीज़ चाहिए। बल्कि जो कुछ दुनिया में अभी नहीं है, वह भी चाहिए। इसलिए उसे स्वप्नशील ता चाहिए। क्योंकि उसका काम एक दुनिया से नहीं चल सकता।'

ये सारी बातें कवि लक्ष्मीकांत मुकुल के लिए भी कही जा सकती हैं। मुकुल एक आंदोलनकर्ता कवि हैं। मुकुल एक घरेलू कवि हैं। मुकुल एक किसान कवि हैं, जिनकी आजीविका खेतीबारी है और उनकी कविताओं के संदर्भ और प्रसंग भी कृषकलोक समाज से अधिक आते दिखाई देते हैं। पहली बार उनकी कविता से मेरा परिचय जमाल पुर, मुंगेर, बिहार से निकलने वाली साहित्यिक पत्रिका 'शब्द कारखाना' के अंक-17 से हुआ, जो बाद के समय में भी बदस्तूर जारी रहा। इसके बाद तो उनकी कविताएं 'संभवा', 'दस्तावेज़', 'कथ्यरूप', 'समकालीन भारतीय साहित्य', 'परिचय', 'युद्धरत आम आदमी' आदि पत्रिकाओं में देखने को मिलती रहीं और प्रगतिशील लेखक संघ के विभिन्न कार्यक्रमों में उनकी सक्रियता भी देखने को मिली। उनकी कविताओं के भाव विचार, अनुभूति और संवेग के तीव्र प्रवाह मुझे आकर्षक लगते हैं, क्योंकि वे गहरे जीवन-राग से संगुफित हैं और उनका स्वर जनपक्षधर और मनुष्यपक्षधर रहा है। इनकी कविताओं के राग और रंग के विभिन्न आस्वाद के पहलू और दृष्टिकोण अपने सार्थक सरोकारों को व्यक्त करते हैं।

यह कवि रोहतास और बक्सर जिलों की सीमा बनाती कोचानो (कंचन) नदी के तटवर्ती गांव में रहता है, जहां प्रकृति से परिपूर्ण जीवन शांति और गंभीरता से भरा है। महानगरों या छोटे शहरों की तरह भागमभाग का जीवन वहां नहीं है, परंतु दुनिया भर में हो रहे बदलाव और बाजारीकरण के प्रभाव से वह जगह अछूती भी नहीं है। कवि जिस इलाके का निवासी है, वह अन्न उत्पादन के मामले में देश भर में विख्यात है। पुराने शाहाबाद का 'भरकी' का क्षेत्र, जो कृषि परंपरा का जीवंत परिक्षेत्र है, वहां का कृषक समुदाय स्थानीय स्तर पर उदारीकरण और शासन के उदासीन रवैए के कारण बेहाल है। सोवियत लेखक रसूल हमजातोव ने जिस तरह 'मेरा दागिस्तान' में अपने स्वदेश के लोकसमाज, वहां की जीवनशैली और जुझारूपना को अपनी पुस्तक में व्यक्त किया है; उसी प्रकार लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं में ठीक उसी तरह के स्वर प्रस्फुटित होते हैं। कवि अपनी कविताओं में गांव, परिवार, रिश्ते, अनुवांशिक संबंधों के धागे, प्रकृति के उपादान, वृक्ष, नदी, खेत-खलिहान, समाजिक लगाव की बातों को जब कविता की भाषा में प्रकट करता है, तो यह कवि आज के मनुष्य में हो रही छीजन और लुप्तप्रायः होते जा रहे प्राकृतिक और ऐतिहासिक-सामाजिक टूटन पर चिंता भी व्यक्त करता है।

बदलाव और सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन तो संसार का नैसर्गिक नियम है। एक मूल्य की टूटने पर नए सामाजिक मूल्य उस खाली़पन के स्थान को भरते हैं, परंतु इससे सदियों से बनाए, स्मृतियों में सहेजे और पीढ़ियों द्वारा संजोये रिश्तों में ह्रास तो होता ही है। ऐसा होने से मानवीय सरोकार के ताने-बाने बिखरते हैं। मुकुल अपने रचना-संसार में प्रमुखता से इस टूटन, इस बिखराव और इस ह्रास को अपनी कविताओं में रेखांकित करते हैं। कवि को पुराने और जड़ हो चुके मूल्य स्वीकार नहीं हैं, क्योंकि मुकुल अतीतजीवी नहीं हैं, न वह अतीत का शिकार होना चाहते हैं। वह वर्तमानजीवी होना चाहते हैं। वह बदलते ग्रामीण परिवेश में मनुष्यता और प्रेमराग के बोध के साथ जीवन के बहाव को समृद्ध करना चाहते हैं। यही वजह है, मुकुल की कविताएं, घटाटोप अंधियारे के विरुद्ध उजास की पहचान की ओर बढ़ते क़दम की तरह हैं। उनकी कविताओं की तीक्ष्ण भाषाशैली, कविताओं को बरतने का उनका विशिष्ट ढंग आदि सूत्र और बीजमंत्र की तरह हैं, जैसे भादों की भकसावन अंधेरी रात में जलती हुई ढिबरी अथवा जाड़े में पुआल जलने की चूक से बरती दियासलाई की भांति।

मुकुल के 'लाल चोंच वाले पंछी' तथा 'घिस रहा है धान का कटोरा' संग्रह में संगृहीत और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कविताओं में स्थानीय संदर्भ में छिपी व्यापक विश्व दृष्टि की बुनियाद प्रकट होती आई है। कवि ग्रामीण समाज के विवरणों को लेकर अपनी कविताओं में अस्मिता से जुड़े गंभीरतम सत्यों को उद्घाटित करता है। वह जानता है कि यह संक्रांति का दौर है। विकास की चकाचौंध में ग्रामीण लोक जीवनधारा के कठोर कगार भी कटाव के शिकार हो रहे हैं। वह उसे पहचानता है और कविता में नए मुहावरे गढ़ता है, 'गांव तक सड़क आ गई / गांव वाले शहर चले गए'। कवि यहां प्रेसिडेंसी शहरों द्वारा सुदूर गांव तक संपर्क पथ के निर्माण के बाद ग्रामीण जीवनधारा का शहरीकरण से प्रभावित होकर खो जाने की बात करता है और अत्याधुनिक सुविधाओं की हवस में गांव से शहरों की तरफ पलायन की ओर इंगित करता है। इस हालत में गांव उजड़ते जा रहे हैं। कविता में सूत्र-संकेतों के माध्यम से कवि कहता है, 'कुलधरा की तरह शाप के भय से नहीं / कुछ पेशे बस कुछ शौक से / छोड़ दिए घर-गांव / खो गए दूर-सुदूर शहरों के कंक्रीटो के जंगल में / छूटे घर गोसाले मिलते गए मिट्टी की ढेर में / पुरखों के संचित खेतों की आय से बनती गईं उनकी शहरी संरचनाएं / उन वंशवृक्षों की टहनियां फूल पत्ते लहराते गए महानगरों के सीमांतों में।'

कवि के पास कविता-सृजन हेतु विषयवस्तुओं की कमी नहीं है। मुकुल कविता के विषय बहुत ही सतर्कता और बारीकी से चुनते रहे हैं। शब्द-चयन में बरती गई सावधानी और बोध के साथ तरंगित अंतर लय इनके काव्यतत्वों के विशेष गुण है, जो पाठकों को सहजता के साथ आकर्षित करते हैं। लक्ष्मीकांत मुकुल की काव्य-भाषा में स्थानीय बोली भोजपुरी का गहरा प्रभाव है, इनकी कविताओं में प्रयुक्त देशज और ठेठ देहाती शब्द इनकी कविताओं के अर्थबोध को बढ़ाते हैं, जिसका पठन और वाचन करते हुए वे शब्द ध्वनियों में घुलकर दिल की गहराई तक उतर जाते हैं। इनकी कविताएं मानव-श्रम की भदेसी उपज हैं, जिसका रसास्वादन करते हुए पाठक कविता के शब्दबोध के सहारे अर्थानुगूंज तक सहजता के साथ पहुंच जाता है। कवि की कविताओं में आत्मसंघर्ष आत्मबोध के रसायन द्वारा संचालित हुआ है।

कवि अपनी काव्य-भाषा के निर्माण में रूपकों, संकेतों, जन-अभिप्रायों का प्रयोग करता हुआ एक जटिल तंत्र के सहारे काव्य-शिल्प और अंतर्वस्तु के भाव-तत्वों पर समान रूप से सजग दृष्टिकोण अपनाता है। इनकी कविताओं में मनुष्यता के बचाव के प्रति दृष्टिकोण प्रमुखता से दिखता है, जिसमें जीवन के विधेयात्मक तत्वों की जरूरत अधिक मूल्यवान मानी जाती है। इनकी कविताएं भाषा, शिल्प, अंतर्वस्तु, कहन और कथन के लिहाज से सरल और सहज है, परंतु अर्थ की दृष्टि से विशेषकर अर्थानुगूंज के लिहाज से आवश्यक है कि इनकी कविताओं का पाठ धीरे-धीरे किया जाए ताकि इन कविताओं की समझ मन-मस्तिष्क के स्तर पर छा सके; क्योंकि ये कविताएं एक नई कलात्मक एवम् प्रत्यक्ष की संवेदनात्मक पर्युत्सुकता जागृत करती है और आंचलिक कविताओं के गुण धर्म के प्रति आश्वस्ति भी प्रदान करती हैं। कवि कहता है, 'नवंबर के ढलते दिन की / सर्दियों की कोख से / चले आते हैं ये पंछी / शुरू हो जाती है जब धन की कटनी / वे नदी किनारे आलाप भर रहे होते हैं / लाल चोंच वाला उनका रंग / अटक गया है बबूल की पत्ती पर / सांझ उतरते ही / वे दौड़ते हैं आकाश की ओर / उनकी चिल्लाहट से / गूंज उठता है बधर / और लाल रंग उड़कर चला आता है / हमारे सूख चुके कपड़ों में / चुन रहे खेतों की बालियां / तैरते हुए पानी की तेज धार में / पहचान चुके होते हैं अनचिन्ही पगडंडियां / स्याह होता गांव / और सतफोड़वा पोखरे के मिठास भरे पानी में / चमकती हैं उनकी चोंच / जैसे दहक रहा हो टेसू का जंगल / मानो ललाई ले रहा हो पूरब का भाल / झुटपुटा छाते ही जैसे चिड़ीदह में पंछियों के / टूट पड़ते ही / लाल रंगों के रेले से उमड़ आता है घोंसला।'

लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं के उत्स में वैचारिक दृष्टि स्पष्टता के साथ दृष्टिगोचर होती है। वामपंथी विचारों से लैस इनकी कविताएं प्रगतिशील और जनवादी समझ के साथ विकसित होकर जमीनी हकीकत के साथ सार्थक हस्तक्षेप करती हैं। यहीं से इनकी कविता की समझ का प्रस्थानबिंदु शुरू होता है। चाहे किसान-मजदूर-भूमिहीन की धरातल से जुड़ी समस्या हो या सोवियत संघ के विघटन के बाद पूंजीवादी एकध्रुवीय विश्व के उदारीकरण और वैश्वीकरण की नीतियों और प्रयोगों से उलझी दुनिया में आमजन और भारत के गांवों पर तेजी से पड़ते उसके प्रभाव को कवि ने स्थानीय स्तर पर एक नई विश्वदृष्टि के साथ संवेदनात्मकता के सहारे आत्मसात किया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन और उसके कार्यों के बढ़ते प्रभाव को कवि ने गांव की बदलते गुणधर्म को समझ-बूझ के साथ इसके व्यापक प्रभाव का आकलन इस प्रकार किया है, 'यह कौन-सी साजिश है कि किसानों की उत्पादित लीची को फेकवाया जा रहा है गड्ढे में / और डिब्बाबंद लीचीयों को दिया जा रहा है बढ़ावा / शातिराना दिमाग़ वाले जल्लाद हड़प लेना चाहते हैं सुरसा की तरह / हमारी खेतिहर व्यवस्थाएं

कल वे हवा बांध देंगे / कि हमारे धान गेहूं के अनाजों से निकल रहे हैं कीड़े / कल वे शोर मचाएंगे कि दलहन-तिल हन के दानों से आ रही है दुर्गंध / हमारे अमरूद / हमारी बेर के फलों को विषाक्त करार देंगे / हमारे लिसोध की फलियों से उसे आएगी बदबू / बाजार व्यवस्था की पीठ पर पालथी मारे बैठे हैं जल्लाद।'

इनकी कविताओं में किसानों के दुःख-दैन्य, अभावग्रस्त जीवन और ग्रामीण स्तर पर उभरते नव सामंतवाद का अच्छा खासा चित्रण हुआ है। ये कविताएं कृषकों के कष्टों और विभीषिकाओं का दोटुक व हृदय विदारक चित्रण हैं। किसान जहां दिन-रात खटकर, सर्दी-गर्मी-बारिश के झंझावातों को सहता हुआ अन्न उपजाता है, परंतु उसके उत्पन्न अनाज को समुचित उत्पादित मूल्य नहीं मिल पाता। उसकी परिश्रमशीलता और विवशता का यथार्थ और मार्मिक वर्णन इनकी कविताओं में प्राप्त होता है। इनकी कविताओं में खेती-किसानी, उत्पादन की बदलते औजार, साधन और खेती बदलते तरीके और कृषक समुदाय द्वारा उत्पादित अन्न के दाने की बाज़ार में हो रही उपेक्षा का सटीक चित्रण भी मिलता है। किसान सदियों से अन्नदाता माना जा रहा है, परंतु नई कृषि नीतियों ने उसे अन्य विक्रेता बना दिया है। दाता से जबरन विक्रेता बना किसान आज भ्रमित है, उसके द्वारा उठाए गए प्राणमूलक अन्न उपेक्षित होते जा रहे हैं। कवि किसान कर्म की इस पीड़ा को अपनी कविताओं में दर्ज करता है। कहते हैं कि लोहे के स्वाद को लोहार जानता है या लोहा निर्माण करने वाला कारखाना का मालिक? लोहा का असल स्वाद तो असल में वह घोड़ा जानता है, जिसके मुख में लगाम लगा है।

लक्ष्मीकांत मुकुल स्वयं एक किसान हैं। खुद़ खेतों में फ़सलों को बोते, पटाते और धान काटकर खेतों से ढोकर खलिहान तक लाते और दवनी-ओसवनी और पशुओं को चारा-पानी देने वाले कृषक मजदूर हैं। वे उनकी खुशी और दर्द को बेहतर तरीके से जानते हैं। गांव और उसकी सोंधी मिट्टी पर दूर से नज़र रखने वाले शहरी ग्राम्य प्रेमी ग्रामीणों के संघर्ष को ठीक से कहां समझ पाते हैं। गांव से सुविधाओं के लिए शहर पलायन कर गए लोगों को गांव की मिट्टी और पशुओं के गोबर से छूछुंदर के सड़ने की गंध आती है और वे गांव को आदि मानव संग्रहालय की तरह अपने दिमाग में संजोकर रखना चाहते हैं। कवि की कविताएं ग्रामीण जीवन के अनुभव की प्रयोगशाला में निर्मित हुए हुई हैं, 'देखना, कभी मनुष्य के श्रम की गंध से / विलग हो जाएगा यह धान का कटोरा / हवाई जहाज़ से होगी धन रोपनी / गैस फिल्टर से निकाई / स्मार्टफोन / रेडियल तरंगों से कीट पतंगों की सफाई / कंप्यूटर के सॉफ्टवेयर से सिंचाई।'

कहा जाता है कि वामपंथी चेतना से लैस कवि केवल क्रांति और जन विद्रोह की बातें ही अपनी कविताओं में करते हैं , परंतु कार्ल मार्क्स के महान मित्र एंगेल्स ने यह माना था कि क्रांति की केवल कविता लिखने वाला युवा कवि अपनी कविता रूपों में इकहरा चित्र का चित्रण करता है । वास्तविक कवि तो जीवन के द्वंदात्मक भौतिकवाद के तत्वों के सहारे प्रेम कविता लिख कर ही पुष्ट हो सकता हैं। लक्ष्मीकांत मुकुल अपनी कविताओं में क्रांति, चेतनात्मक संघर्ष और प्रतिरोध के स्वर ही केवल नहीं व्यक्त करते, बल्कि विपुल मात्रा में प्रेम-राग के स्वर भी उनकी कविताओं में प्राप्त होते हैं। कवि केवल अपनी प्रेयसी, जीवनसंगिनी, रिश्ते-नाते, घर-परिवार से ही प्रेम नहीं प्रकट करता, अपितु उसके प्रेम का फैलाव अपने परिवेश के वानस्पतिक दृश्यावलोकों की गहरी अंतरंगता से भी जुड़ता है। खेत, फसल, नदी, पोखर, फल- फूल, वृक्ष-लताएं सभी उनकी काव्य-वस्तु के फ़लक में समाहित हो जाती हैं। इससे स्पष्ट है कि मुकुल की कविताओं में अनुभवों का अनंत संसार समाहित है। प्राकृतिक अवयवों, जीव-जंतुओं, ग्रामीणों, लोक आचरणों और बंधुत्वता की अनगित कड़ियों में समाहित उनका प्रेमबोध अर्थग्राही और जागृत मानसिक संवेदनात्मक ज्ञानबोधक क्षमता की उपज है। इस कवि ने अपनी प्रेम कविताओं में भी मनुष्यता के बचाव की खा़तिर अपने भयावह समय को कुशलता प्रकट किया है। कवि अपनी कविता में वर्णन करता है, 'डर जाते हो तुम लहकते जेठ में / खेतों से गुज़रते हुए टिटिहरी की टीऽ टीऽ सुनकर / ठीक सामने सड़क पर पार करते हुए सियार को देखकर / हो जाते हो आशंकित / घूमकर बदल लेते हो राह / देर रात गए कुत्तों की रोने की आवाज़ / अंदर तक भयभीत करती है तुम्हें / अंधेरे में नदी का पाट लांघते / याद करने लगते हो हनुमानचालीसा के पाठ / ठिठक जाते हो सुनसान में सुनकर वृक्ष-पातों की खड़खड़ाहटें / छत पर सोते समय / अर्ध रात्रि में निशाचर खग-झुण्डों के पांखों की तेज़ आवाज़ में / खोजने लगते हो चुड़ैलों की ध्वनियां / कुछ देर पहले ही तो / जूझकर लौटा हूं मैं / हत्यारों की खौफ़नाक गलियों से बेधड़क मचलता हुआ / बेहद निडर, बेखरोच, सुरक्षित।'

हम कह सकते हैं कि कवि की प्रणयानुभूति और प्रेम विषयक अवधारणा उनकी गहन आंतरिक संघर्ष का प्रतिफल है। कवि को प्रेयसी का रूप-विधान प्रकृति के रमणीय सभी रंगों में दिखता है, जैसे पीले रंग के फूलों में पीली चुनरी रंग, रंगों और गतियों के विभिन्न रूपों के प्रतीकों का इन्होंने अपनी बोलचाल की भाषा में कविता में प्रयोग किया है। कविता के शब्दचित्र, कवि की आंतरिक भावनाओं और संवेदनाओं से युग्म में होकर पढ़ने वालों के मन को आद्र कर देते हैं। कवि की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति, अभिनव रचनात्मक गतिशील चित्र-समूहों की प्रस्तुति और वर्णज्ञान से कविता साकार हो जाती है। इनकी कविताओं में प्रेम-राग दांपत्य के बंधनों से युक्त मनुष्यता और मार्मिकता को प्रकट करने वाला है, जिसकी मनोभूमि स्वस्थ गृहस्थ प्रेम है, जिसमें विपुल स्तर पर करुणा का संचार हुआ है। इन कविताओं में जीवनसंगिनी की दीप्त मुस्कान भी है और स्पर्श का अनूठा साहचर्य भी, जिसके कारण मुकुल प्रेमभाव प्रवण और रागात्मक संवेदनाओं से परिपूर्ण दिखाई देते हैं, 'शगुन की पीली साड़ी में लिपटी / तुमने देखा था पहली बार तो लगा / जैसे बसंत बहार की टहनियों में भर गए हों फूल / सरसों के फूलों से छा गए हो खेत / भर गई हो बगिया लिली-पुष्पों से / कनेर की लचकती डालियां डुल रही हों धीमी / तुम्हें देखकर पीला रंग उतरता गया / आंखों के सहारे मेरी आत्मा के गहवर में / समय के इस मोड़ पर नदी किनारे खड़ा एक जड़ वृक्ष हूं मैं / तुम कुदरुन की लताओं-सी चढ़ गई हो पुलुई पात पर / हवा के झोंकों से गतिमान है तुम्हारे अंग-प्रत्यंग / तुम्हारे स्पर्श से थिरकता है मेरा निष्कलुश उद्वेग।'

लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताएं प्रेम तथा समकालीन समय की विसंगतियों, विडंबनाओं और चुनौतियों से मुठभेड़ करती हैं। इनकी कविताओं में शोषण-दमन-उत्पीड़न और अपसंस्कृति के बढ़ते प्रभाव से सामाजिक मूल्यों में क्षरण जैसे युगीन कठोर सामाजिक यथार्थ भी रेखांकित होते हैं। वैसे तो ये मौन प्रतिरोध की कवि है, परंतु उत्साह और साहस का संचार करती इनकी कविताएं मनुष्यता पर हो रहे लगातार हमले की विरुद्ध मुखर हो जाती हैं। कवि का मानना है कि मनुष्य को कुदरत ने दो अनमोल उपहार दिए हैं - पहला, स्वस्थ लोक व्यवहार साकार करने के लिए मनुष्यता का बोध और दूसरा, सबको बंधुत्व के धागे में एक साथ बांधने के लिए प्रेम की भावना। उनका मानना है कि मनुष्य के पास ये अद्भुत उपहार दुर्लभ निधि के समान है, अक्षय अमृत घट की तरह है। इसी को बचाने से मनुष्य बच पाएगा। मनुष्यता पर आधारित आध्यात्मिक, आभासी और दुनियावी जीवन भी बचा रहेगा। कवि के अनुसार बर्बर और विनाशकारी माहौल में भी गहरी संवेदना और आत्मीयता की दुर्लभ गुणों से इंसानी जीवन-मूल्यों को बचाया जा सकता है। यह कवि मुझ जैसे कवियों में उत्साह भरने के लिए लिखता है, 'तुम्हें याद है न बदरुद्दीन मियां / वह अमावस की रात / कैसे बचाने आया था तुम्हारे पास वह पंडित परिवार / जो बांचता था भिनसारे में रामायण-गीता की पोथियां / वह निरामिष तुलसी दल से भोग लगाने वाला / जिसका समाज तुम्हारे इलाक़े को / मलेच्छों का नर्क मानता और तुम मानते रहे उसे काफ़िर की औलाद।'

लक्ष्मीकांत मुकुल देशकाल के लोकतांत्रिक मूल्यों के क्षरण से व्यथित और संवेदनशील कवि हैं। उनकी कविताएं सहज-सरल भाषा में सत्य को कहने और समाज में व्याप्त दुश्मनों पर प्रहार करने की ताक़त रखती हैं, कवि ने लोकतंत्र के सभी मान्य स्तंभों की जड़ों के खोखला हो जाने, सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक व्यवस्थाओं के दोगलेपन पर बेलाग, निश्छल और बेबाक अभिव्यक्ति अपनी कविताओं के माध्यम से की है और शोषित-पीड़ित-अभावग्रस्त सामान्य जन समुदाय के दर्द से भीगे आंसुओं को अपनी कविताओं में व्यक्त किया है। इनकी कविताओं का निष्कर्ष पीड़ित मानवता से मुक्त होने के लिए जन संघर्ष के रास्ते पर चलने का आह्वान भी होता है। इतना ही नहीं, मुकुल की कविताओं का रचना-संसार सर्वथा नए बिंबों और उपमाओं से आच्छादित है और उपमेयों के सहारे आंतरिक व बाह्य सौंदर्यानुभूति को दृश्य लेखों के माध्यम से ठंडक के विरुद्ध गर्माहट भरी ऊष्मा के साथ ताज़गी प्रदान करता है। रूप-रस-गंध-स्पर्श और शब्द ध्वनियों के आधार पर जीवन-संघर्ष और प्रेम-अनुराग से जड़ित अभिव्यक्ति इनकी कविताओं की विशेषताएं हैं। कवि ने अपने आसपास की विषयवस्तुओं पर जो लिखा है, उससे उनकी जनचेतना और लोकानुराग की पुष्टि होती है। बोधा वाला पीपल, गांव की बरसाती नदी, गड़ेरिए की भेड़ें, स्यारों के पीछे दौड़ते शिकारी कुत्तों के साथ सियार बझवे और नदी में मछली मारते मछलीमार, गांव की गलियां, खेतों की पगडंडियां और मेड़ इनकी कविता की भाषा में चित्रित हुए हैं और दृश्य, श्रव्य,नाद मिश्रित और सरल बिंबों के प्रयोग से इनकी कविताएं समृद्ध हुई हैं। कवि बिम्ब, प्रतीक और मिथकों का उपयोग प्राकृतिक उपादानों, स्थानीय लोकतत्वों और यथार्थ-चित्रण में आधुनिक बोध की अभिव्यक्ति के लिए करता है। कवि के प्रयुक्त ये अद्भुत बिम्ब उसकी आंतरिक अनुभूतियों पर कुशल कारीगर की तरह बुने गए शब्दचित्र कहे जा सकते हैं।

इतना ही नहीं, इस कवि की कविताओं में सौंदर्यबोध भी काफी उमड़कर आया है। सौंदर्यानुभूति कविता का मूल गुण धर्म होता है, जो इंद्रियबोध और अनुभव के सार्थक संयोजन से सुगठित होता है। कवि लक्ष्मीकांत मुकुल को अपने स्थान के विविध वृक्षों, फ़सलों, मिट्टी के प्रकारों, जीव-जंतुओं, पंछियों, स्थानीय घासों, लोकवार्ताओं और लोक-अनुभव का गहरा ज्ञान है। कवि विविधता से भरे अनुभवजन्य ज्ञान को कविता के माध्यम से व्यक्त करता है। इससे आगे जाकर कहें, मुकुल की कविताएं शिल्पगत, भावगत, भाषागत, कल्पनागत होने के साथ-साथ घटनात्मक, परिवेशात्मक और प्रतिकारात्मक सौंदर्यबोधके अवयवों से पूरित होकर बोधगम्य, सजीव और जीवंत बन जाती हैं।

मोहन राकेश के प्रसिद्ध नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में प्रसंग आया है कि तत्कालीन राजधानी उज्जैन से कालिदास के पैतृक गांव को देखने और उनकी कविता में वर्णित भूदृश्यों के आधार पर चित्र बनाने वाले कुशल चित्रकार आते हैं। लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं के अवलोकन आधार पर यह कहना उचित होगा कि कवि अपने परिवेश, अपनी धरती और वहां की नैसर्गिक और वानस्पतिक संपदा को अपनी कविताओं के माध्यम से चित्रित करता है, उसके आधार पर कवि की पृष्ठभूमि, उसके कविता के प्रभाव के कारक, कविता की रचनाप्रक्रिया आदि को समझा जा सकता है। इनकी कविताओं में जहां वैचारिक रचनात्मक द्वंद के तंतु प्राप्त होते हैं, वहीं राग और अनुराग का समुच्चयबोध भी मिलता है। वे कविताओं में एक तरफ़ न्याय-योद्धा के रूप में सामने आते हैं और दूसरी तरफ़ प्रेम की मधुरता के चहेता प्रतिरूप में भी। इस प्रकार, लक्ष्मीकान्त मुकुल की कविताएं उन ढेर सारे आदमियों के बारे में हैं, जो अपने जीवन में हाशिए तक पर दिखाई नहीं देते। यह सच ही है, वे लोग यदि अचानक प्रकट होते हैं, तो आपको लगेगा कि यह आपके जीवन का बड़ा मार्मिक अनुभव है। ऐसा इसलिए होता रहता है कि वे लोग अब भी अभावग्रस्त जीवन जीने को मजबूर हैं। अंततः लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताएँ हमें सुख का अनुभव ही नहीं करातीं बल्कि आंदोलित भी करती हैं, हम सबके गहरे भीतर जाकर।

संपर्क : हुसैन कॉलोनी, नोहसा बाग़ीचा, नोहसा रोड,
पूरब वाले पेट्रोल पाइप लेन के नज़दीक, फुलवारीशरीफ़,
पटना-801505, बिहार।
ई-मेल : shahanshahalam01@gmail.com

' घिस रहा है धान का कटोरा ' : बिंबों में गाँव

शैलेंद्र अस्थाना

'घिस रहा है धान का कटोरा' लक्ष्मीकांत मुकुल का सद्य प्रकाशित काव्य संकलन है . इसमें छोटी- बड़ी पचहतर कविताएँ संग्रहित हैं , अंतिम कविता भोजपुरी भाषा में है . पुस्तक का नाम व्यापक अर्थ अभिव्यंजित करता है . हालाकि उड़ती नजर डालने वालों को यह नाम विभ्रम में डाल सकता है और वे इसे थोड़ी देर के लिए भूगोल , कृषि अथवा अर्थशास्त्र से जुड़ी पुस्तक समझने की भूल कर सकते हैं , वैसे मुकुल जी को इतिहास और भूगोल में गहरी रूची है और स्थानीय इतिहास तथा भूगोल का विस्तृत ज्ञान है , यह दिगर बात है , अपनी बात यह है कि पुस्तक का नाम ' घिस रहा है धान का कटोरा ' संकलन के विषय , कथ्य और मिजाज को सांकेतिक अभिव्यक्ति देता है तथा पुस्तक के उद्देश्य को अर्थ देता सटीक लगता है , पुराने जमाने से ही कैमूर, रोहतास , भोजपुर तथा बक्सर का इलाका अपनी उर्वर भूमि और कृषि उत्पाद के लिए जाना जाता है , धान का उत्पादन अधिक होने के कारण यह धान का कटोरा कहा जाता है . इस संकलन की कविताएँ इसी क्षेत्र के लोगों के जीवन तथा वहाँ के इतिहास को केन्द्र में रख कर रची गई हैं . 'घिस रहा है' एक विशेष अर्थ देता है और कविताओं से गुजरने पर इसका अभिप्राय प्रकट हो जाता है कि यह कटोरा घिस क्यों रहा है ? इसके क्षरण के लि ए कौन जिम्मेदार है ? वस्तुतः घिसना एक अनवरत , ल म्बी तथा धीमी प्रक्रिया है, जिसका आभास नहीं होता . यह अंततः विलोपन की ओर ले जाती है . पुस्तक वहाँ को लोकजीवन , वहाँ की पारिस्थितिकी , संस्कृति का जीवंत चित्र प्रस्तुत करती हैं तथा बदलते समय में जटिलतर होते सामान के यथार्थ से भी रूबरू कराती है , परिवेश की चित्रमयता तथा उसका डिटेल ऐसा आभास कराता है कि पाठक कवि की ऊँगलियाँ पकड़ कर खेतों, पगडंडियों, गलियों, नदी- नालों के आरों से गुजर रहा है . कवि ने वहाँ बोली जाने वाली सीधी - सरल भाषा का प्रयोग किया है और दुरुह शब्दों अथवा कृत्रिम मुहावरों के प्रयोग से परहेज किया है , उस क्षेत्र का अतीत और वर्तमान अपने ठेठपन के साथ प्रस्तुत हुआ है . संकलन में प्रेम पर भी कविताएँ हैं, जो प्रेम के उदात् रूप को नए अंदाज में नए अनछुए प्रतीकों के द्वारा अभिव्यंजित करती है. कवि ने लोक जीवन और उसकी विसंगतियों को सैलानी पंछी की तरह विहंगम दृष्टि डाल कर नहीं देखा है, वरन उस परिवेश में आँखें खोलने वाले , उसमें डूबने - उतराने वाले व्यक्ति के रूप में उसके यथार्थ को महसुसा है , एक नई दृष्टि से ग्रामीण परिवेश को देख - समझ कर उसके यथार्थ का प्रतीकों के माध्यम से काव्यांकन करने का प्रयास किया है . गाँव कवि के हृदय में बसा है, किन्तु उसकी दृष्टि कहीं भी भावुकतापूर्ण तथा सब्जेक्टिव नहीं है , वह आधुनिक , वैज्ञानिक तथा तर्क पूर्ण है , तभी वह ग्राम जीवन के यथार्थ की सच्ची अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने में सक्षम हो पाया है , वंजर होती जा रही धरती, अतिक्रमित उच्छेदित होते जंगल, मनुष्य के आक्रामक स्वार्थ के सामने हाथ जोड़ती प्रकृति कवि को विचलित और दुखी करते हैं . इसी दुख को कवि ने 'फिर आएगा बुकानन' कविता में व्यक्त किया है- 'कोइल वर घाट पार करते वह पाएगा
कि सोन में कितनी कम बची है धार '

यहाँ वह गाँव को एक स्वप्नजीवी कवि की दृष्टि से नहीं वरन एक भूगोलवेत्ता की दृष्टि से , समाजसुधारक की तरह किसान के पक्ष में खड़े हो इतिहास के संदर्भ में देखता है और यथार्थ को ढूंढने का प्रयास करता दिखता है-

' वह अचरज से भर जाएगा यह पा कर कि अंग्रेजों से लूटने में कितने माहिर हैं यहाँ के मुखिया - सरपंच - अफसर- मंत्री

ड फिर आएगा बुकानन .

साहित्य का उद्देश्य बेहतर मनुष्य का निर्माण है , वह मानवीय संवेदनाओं की तीव्रता को सशक्त करता है तथा मानवीय संवेदना का आलोक जहाँ कहीं भी उपस्थित हो उसका दर्शन कराता है , जब हिंसा और आत्याचार की धधकती ज्वाला में मानवता विकलांग और विवश हो जाती है, ऐसे समय में भी मानवीय संवेदनाएँ जीवित बची रहने का साक्ष्य प्रस्तुत करती हैं-
' हत्यारों की हबस से लाल हो गई थी कामनात
तुम्हे बचाने नहीं आए थे पैगम्बर न
कोई फरिश्ते '
ड जोल्हह लूट में बचे बदरुदीन मियाँ .

ऐसे समय में इंसानी छतरियों - सा तन कर बचा लेते हैं, काफिर समझे जाने वाले पंडितजी म्लेच्छ कहे जाने वाले मुहल्ले बदरुद्दीन मियां को . ढेर सारी विसंगतियों को ओढ़ते विछाते . ग्रामीण जन के हृदय में बची शाश्वत मानवीय संवेदना और करूणा में कवि का विश्वास झलक जाता है . अपने समय की घटनाओं से कवि निरपेक्ष नहीं है . सन् 2021-22 में आंदोलन कर रहे किसानों की समस्याओं और उनके संघर्ष को उकेरती है कविता 'दिल्ली के सड़कों पर किसान' परिवार की खुशहाली की तलाश में दुखों के पहाड़ लादे सिर पर सुदूर देश जाने वाले किसान पुत्रों की पीड़ा बयान करती है 'बिहारी' कविता , कभी गुलजार रहा राजस्थान का कुलधरा गाँव आज विरानी का प्रदर्श बन कर रह गया है . इसी गाँव का रूपक लेकर लिखी कविता ' कुलधरा के बीच मेरा घर ' पलायन से विरान होते गाँव का चित्र उकेरता है.

कवि मनुष्य द्वारा प्राकृति के अंधाधुंध दोहन और अतिक्रमण से आहत है और भविष्य के प्रति आशंकित-
'बाइसवीं सदी में खो गई होगीं नदियाँ
रेतीले तलछटों में'
ड बाईसवीं सदी में .

पर्यावरण की चिन्ता ' जहर से मरी मछलियाँ ' , ' किसने कैद किया जल धारों को' , ' विलख रही यमुना की नीली जलधारा' जैसी कविताओं में करुणामयता के साथ प्रकट होती हैं, स्थानीय भूगोल के विविध प्रसंग अनेक कविताओं के उपादान बन कर
है. यह एक प्रकार से नया प्रयोग है. स्थानीय इतिहास में मुकुल जी को न केवल गहरी रुची है. वरन, वे कविताओं में इतिहास का उत्खनन करते दिखते हैं. इतिहास के प्रति उनका दृष्टिकोण आलोचनात्मक है. वे इतिहास को भविष्य के निर्माण के संदर्भ में देखते है उसमें जीने के लिए नहीं कहा जाता है कि जीवन को समझने के लिए पीछे की ओर देखना होता है और जीने के लिए आगे की ओर.
प्रेम मनुष्य की पहचान है प्रेम मानवीय संवेदनाओं को उर्जित करता है, विकट परिस्थितियों में भी आशा और विश्वास टिकाए रखता है तथा जीवन की कठोरता के बीच भी कौमल्म की अनुभूति जीवित रखता है, साहित्य और कला का उद्देश्य प्रेम को विस्तार देना और मानव हृदय को और अधिक संवेदनशील बनाना है. संकलन में प्रेम पर कई कविताएँ हैं जो प्रेम को बेहद संवेदनशीलता तथा सूक्ष्मता से उकेरती हैं. यहाँ प्रेम के मांसल रूप का एक भी रेशा नहीं दिखता. कवि की प्रेमिका का कोई पार्थिव पहचान नहीं है. वह उसे- 'यादों में खोजता है
कभी प्रतीकों में
तो कभी भूले बिसरे प्रतीकों में'
डबिंध प्रतिबिंब.

यहाँ प्रेम एक नया जीवन ले कर आता है जैसे-
पेड़ो में आते हैं
नन्हे दुस्से
खलिहान से आती है
नवान्ह की गंध
तुम आती हो खयालों में
ड पहली बार.

प्रेम का एक दार्शनिक पक्ष भी है . वह हृदय को नए आलोक से भर देता देता है , प्रेमी एक नई दृष्टि पा लेता है
'जब तुमने कहा कि
तुम्हे तैरना पसंद है
मुझे अच्छी लगने लगी नदी'
ड देखना फिर शुरू किया दुनिया को.

कवि का प्रेम वायवीय नहीं, वह प्रेम के उत्कर्ष को प्रतिकात्मक अविव्यंजना देते कहता है जैसे-
'बाढ़ से बौराई दो नदियाँ
आपस में खो जाती हैं मुहाने पर
गुथ्थम गुथ्थ'

प्रेम का एक और रूप मिलता है दशरथ माझी के अथक प्रयास में , उनके अदम्म जिजीविषा में-

'तुम्हारे नाम से जीवंत होती है
बर्बर युग में
प्रेम की संकल्पना '
ड अदम्य इंसान थे दशरथ बाबा .

कवि उस कवि को भी याद करता है जिसने-
'जिसने समझाया हिन्दी कविता में
स्थानीयता का बोध
निजता में विश्व दृष्टि का फलक'
कविता में उस कवि का नाम नहीं है किन्तु 'यहाँ से देखो' तथा माझी के पूल को संदर्भ स्पष्टतः केदारनाथ सिंह की ओर संकेत करदेते हैं.

संकलन की पहली कविता 'छोटी लाइन की छुक - छुक गाड़ी' को नॉस्टाल्जिक भाव से याद करता अपने स्मृतियों का उत्खनन करता दिखता है और रेलगाड़िओ में आए बदलाव के साथ लोगों के व्यवहार और उनकी मानसिकता में हुए बदलाव की ओर संकेत करता है .

'घिस रहा है धान का कटोरा' सतरह खंडो में बंटी एक लम्बी कविता है. इसी कविता से इस संकलन का नाम भी लिया गया है. यह धान का कटोरा किसी क्षेत्र विशेष का ही नहीं,कहीं का भी हो सकता है धान का कटोरा-
' पहाड़ों की घाटियों-तलहटियों में
समतल मैदानों में
राह बदल चुकी नदियों की छाइन में'.

घिसना परिस्थिति जन्य एक धीमी प्रक्रिया है इसका आभासजल्दी नहीं होता, उस क्षेत्र के लोगों के जीवन, उनकी आर्थिक स्थिति, कृषि और संस्कृति में हो रहे क्षरण तथा विहपण को यह शब्द सटीकता से प्रतिकात्मक - अविभ्यक्ति देता है. किसानी छोड़
श्रमिक बनने के लिए औद्योगिक नगरों की ओर पलायन को विवश युवा, साम्राज्यवादी बाजार का बसता शिकंजा, बदलती कृषि व्यवस्था से ध्वस्त होती ग्रामीण संरचना के रंग रेशे इस कविता में विन्यस्त हैं. इस कविता में कवि अतीतजीवी नहीं
है, उसका उद्देश्य-
'अन्न तृप्ति की पहचान की बुनियाद
बचाने का भरसक प्रयास'
के लिए प्रेरित उत्साहित करना है. वह ठहरकर सोचने के लिए कहता है, कि-
'कि आने वाले दौर में
किसान विरोधी दतैले चूहों के
बील में कौन डालेगा पानी'

स्पष्टतः यह मानवता विरोधी शक्तियों से दो दो हाथ करने का अह्वान है।

संकलन की अंतिम कविता 'भरकी में चहुंपल भईंसा' भोजपुरी में है. यह अटपटा लग सकता है, किन्तु यदि भोजपुरी को हिन्दी की सखी भाषा मा उपभाषा मान लें तो इसकी उपयुक्तता समझ में
आ जाती है, भाषा महत्वपूर्ण नहीं है. महत्व की बात है इस कविता का लक्ष्य और शैली तथा रौंदी जा रही कृषि व्यवस्था, घायल होते ग्राम जीवन की अभिव्यंजना खेतमें पहुँचा भैसा कौन है ? किसका प्रतीक है? स्पष्टता यह भारतीय कृषि व्यवस्था को बेमरौवत रौंदने वाला साम्राज्यवादी शोषण का भैंसा है, इसे भगाने के लिए लोगों का आह्वान करते हुए कवि लोगों से प्रश्न करता है, कि भैंसे के कहर से स्वयं भागा जाय या इस अंधेरी रात में लुकार (मशाल जैसी चीज) लेकर उसे भगाया जाए-' भागल जाव कि भगावल जब ओके सीवान से भकसाइन अन्हरिया रात में लुकार बांह के'

शब्दों की मितव्ययीता कविता की मांग होती है. इस संकलन की कविताओं से गुजरते हुए लगता है जैसे कवि के जेहन में ढेर सारे शब्द व्यक्त होने के उछाल मार रहें हों और कवि उसके मोह से बच नहीं पा रहा हो. कई जगह शब्दों के विस्तार के कारण कविता बिखराव की ओर लुढ़कती लगती है. कविता की बुनावट में ठोसपन और चुस्ती वांछनीय गुण माना जाता है, इसका अभाव से प्रवाह और प्रभाव के बाधित होने की संभावना बन जाती है. वावजूद संकलन की कविताओं में उबाउपन नहीं है पाठक की दिल चस्पी बनी रहती है, निराला भाषा को भावों की अनुगामिनी कहते हैं. कविताओं में ग्रामीण (गवंई) संदर्भों, मुहाबरों के भाषा को भाव के अनुकूल बनाने के साथ पाठक को कविता के परिवेश में पहुंचा देते हैं, जिसे वह स्वयं देखने अनुभव करने लगता है.
कहा जाता है कि कविताएँ जीवन से निर्मित होती हैं, और जीवन के लिए होती हैं. यह संकलन ग्रामीण जीवन के अतीत, उसमें आए परिवर्तनों, उनके इर्ष्या,द्वेष, प्रेम सद्भाव, दुख-सुख, भावनात्मक सम्बन्धों की निश्छलता सभी को सजोए ग्रामीण जीवन का कोलाज लगता है. कवि गाँव तथा लोक जीवन को दुनिया से काट कर, आइसोलेशन में नहीं देखता.
वरन, भूमंडलीकरण के दौर में साम्राज्यवादी बाजार के घात- प्रतिघातों तथा तत्जनित विद्रुपणों तथा संकुचनों के संदर्भ में देखता हैं और इसकी अनुभूति को चित्रमय काव्याभिव्यक्ति प्रस्तुत करता है.

'घिस रहा है धान का कटोरा' :- कविता-संग्रह
कवि :- लक्ष्मीकांत मुकुल
प्रकाशक :- सृजनलोक प्रकाशन,नई दिल्ली-110062
मूल्य :- 299/-, पृष्ठ :-168, वर्ष :- 2022 ई.

संपर्क सूत्र-
- 1731, सिन्डिकेट कॉलोनी,
उलियान, कदमा,
जमशेदपुर, पिन कोड - 231003
(झारखंड)
मो. 9470505715
ईमेल- skasthana.jsr@gmail.com

लक्ष्मीकांत मुकुल की कविताओं में प्रकृति से साहचर्य की परिणति

हरेराम सिंह

लक्ष्मीकांत मुकुल हिंदी के उन कवियों में से हैं जिनकी चेतना किसान जीवन के कठोर यथार्थ से उत्पन्न है.जब अधिकतर कवि शहरी जीवन के इर्द-गिर्द उत्पन्न घुटन,टूटन और बिखराव को अपनी कविता के अंकुरण के लिए आधार-भूमि बना रहे वहीं लक्ष्मीकांत मुकुल किसान,किसानी,फसल और किसान और फसलों के मारे जाने का दर्द एवं टीस को अपनी अभिव्यक्ति का आधार बनाए हैं.खासकर शाहाबाद के सहारे पूरे देश के किसानों की खबर ले रहे हैं.इनकी खासियत है कि ये 'धान की प्रजातियों'का वर्णन इतने मनोयोग से करते हैं कि मेरे देखे समकालीन कोई हिंदी का कवि ऐसा चित्रण करते दूर-दूर तक दिखाई नहीं देते;पर अफसोस यह कि ये प्रजातियाँ उजड़ती चली गईं और 'पूँजिपतियों'ने पैकेट का बीज से बाजार को पाटकर इनकी जान ले ली.और यही क्रम लगातार जारी है और उन पर किसी का किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं है.आखिर किसान की बात कौन सुन रहा है ?इस स्थिति को देखें तो लक्ष्मीकांत किसानों की चिंता करने वाले,उनके जीवन व संस्कृति की खबर लेने वाले कवियों में से हैं.शाहाबाद का एक और कवि कुमार वीरेंद्र ने भी अपनी कई कविताओं में किसान जीवन के कई परत को उकेरा है.किंतु लक्ष्मीकांत की 'हरेक रंगों में दिखती हो तुम'मदार से लेकर अप्रैल की सुबह में धीमी हवा डुलती चाँदनी की हरी पत्तियों की धवल कीर्तिगान गा रही है और साथ में 'लोकगीतों'की छंटा से मन को रोमांचित कर रही है.'बभनी पहाड़ी''पीली साड़ी में लिपटी बसंती बहार की टहनी' से एक अद्भुत वातावरण बुन रही है जिसे सिर्फ व सिर्फ किसान ही बुन सकता है.

'वसंत का अधखिला प्यार'कविता यादों के कुहासे चीरती हुई स्निग्ध मुस्कान से तन-मन और हृदय को पूरी तरह सराबोर करती हुई 'तरकुल'वृक्षों की मनोरम दृश्यों से 'प्रेयसी'की याद दिलाती है और कवि 'वनतुलसी'के मादक गंध से रोमांस अनुभव करता है.और इनके बिंब लंबी जीवन यात्रा की ओर इशारा करते हुए 'समय की क्रूरता'की ओर इशारा करता है.और कोमल कल्पनाएँ तेज धूप में झुलसा जा रही हैं .'जहर से मरी मछलियाँ'कविता मछलियों की अनेक नस्लों के सहारे 'चिलवन की कैद'से आजाद होने की कथा कहती है .और यह आजादी मनुष्य को भी बहुत प्यारी है जिसे पाने के लिए वह युगों से संघर्ष करता रहा है.यह संघर्ष मुकुल जी की कविताओं की जान है.'कुल धरा के बीच मेरा घर' पूरखों की यादों को जीवंत बनाती है.पर चमगादड़ों की आवाज डरा भी जाता है .यह इतिहास का एक सच है और इसे स्वीकारने की जरूरत है.कार्तिक महीने और पीडिया गीत हमारी संस्कृति के महान् अंग रहे हैं और बैलों की घंटियों की टुनटुनाती आवाज उस महान् संस्कृति को पुष्ट करने में सहायक है पर दुख इस बात की कि कोई उसे सच में पाना नहीं चाहता.खासकर वह वर्ग जो 'हल की मूठ'पकड़ने में अपनी नीचता समझता है.पर लक्ष्मीकांत मुकुल 'घिस रहा है धान का कटोरा'के सहारे इस मिथ से लड़ते हैं और कृषि कर्म को गौरव की नजर से देखते हैं.वे लिखते हैं-'हिल हिल घिस रहा है धान का कटोरा

अपनी अकूत खाद्य संपदा ,
अपना स्वाद ,गंध ,नैसर्गिकता
मिट्टी की सुवास
अन्न तृप्ति की पहचान की बुनियाद
बचाने का भरसक प्रयास करता हुआ!'

लक्ष्मीकांत मुकुल का जन्म बक्सर के धनसोई के पास सैसड़ के मैरा गाँव में हुआ.वे अपनी आँखों से बक्सर,आरा,भभुआ और सासाराम को देखे व भोगे. दिनारा,नोखा और करगहर इनके जीवन में रचे बसे जगह हैं और इनकी कविताएँ इनसे लबालब भरी हुई हैं.'धान का कटोरा'कहे जाने वाला यह क्षेत्र कई उतार चढाव के गवाह रहे हैं पर पूँजी और बेरोजगारी की मार ने इस क्षेत्र को बदहाल बनाने से नहीं चूका.लक्ष्मीकांत मुकुल की यह कविता इसी दर्द से उपजी है जहाँ प्रकृति की रक्षा के साथ किसान और उसके परिवार की चिंता कवि के महान् लक्ष्य हैं और पानी,पोखर,शीशम ,शंख,सीपी,हंसुआ,खुरपी व कुदाल के सहारे वह वितान रच रही है.

जहाँ हाईब्रिड की मार को वह असधारण मान रहा है और इस अत्याचार ने फसलों को मौलिक नहीं रहने दी इसका नतीजा यह हुआ है कि वह अपनी प्रकृति से बिल्कुल कट गया.मनुष्य में भी कृतिमता आ गई और वह अपनी सुगंध खोता गया पर प्रेम व प्रकृति विविधता के संसर्ग से ही खिलते हैं पर अपनी मौलिकता की गंवाकर नहीं बल्कि बचाकर.कवि अपनी तमाम कविताओं में इस मौलिकता को बचाना चाहता है.पर उसका यह बचाव पक्ष यथास्थितिवाद नहीं है,बल्कि प्रकृति की अपनी संतुलन को बिगाड़ने की चाह रखने वाले के प्रति विद्रोह है और कवि इस विद्रोह को द्वंद के सहारे जी रहा है.